सँभलकर बात कहता था, और न उसकी ज़िम्मेदारी ही अपने ऊपर लेता था। दिग्गज पण्डित अँगरेज़ी न जानते थे। किसी स्त्री के परीक्षा पास करने का समाचार सुनते ही क्रोध के मारे उनके बदन में आग लग जाती थी। भूपेन्द्र बाबू की कन्या के प्रसंग में वे एकाएक कह उठे—शैल बाबू, एक जोड़ू को घर से खेद दिया, दूसरी को जप डाला, फिर भी तिबारा ब्याह की कोशिश कर रहे हो! अगर घर-गिरस्ती ही सँभालनी है तो उमेश भट्टाचार्य की लड़की (यानी शैलेश्वर की पहली, परित्यक्त, पत्नी) ने क्या अपराध किया है? घर बसाना हो तो उसी को लाकर बसाओ बाबू साहब।

उपस्थित भलेमानसों की मण्डली में कोई भी इस रहस्य के बारे में कुछ न जानता था। सभी आश्चर्य-चकित हो गये। दिग्गज कहने लगा—उस बेचारी की ओर अगर भगवान् ने कृपा-दृष्टि फेरी है, उसके लिए यह सुअवसर उपस्थित कर दिया है, तो फिर उसी को तुम घर में लाकर रक्खो—नया ब्याह करने का इरादा न करना। मैट्रिकुलेशन पास है! पास होने पर तो फिर सभी कुछ होगा!

गुस्से के मारे दिग्गज की आँखें लाल हो उठीं। शैलेश्वर ने ख़ुद भी किसी तरह क्रोध का वेग दबाकर कहा—अरे वह तो पूरी पगली है दिग्गज पण्डित!

कोई किसी को पागल कह बैठता तो फिर दिग्गज अपने आपे में न रहते थे। इस समय एकदम बिगड़कर बोले—

पागल तो सभी हैं। मुझको भी लोग पागल कह बैठते हैं, तो क्या इससे मैं पागल समझा जाऊँगा? या मैं सचमुच पागल हूँ?

सब लोग ज़ोर से हँस उठे। लेकिन उस हँसी में बात दबी नहीं। हँसी का वेग थमने पर शैलेश्वर ने लज्जित मुख से स्वयं सारी घटना ब्यौरेवार कह सुनाई। कहा—मेरे जीवन में वह अत्यन्त बदनसीबी (unfortunate) की घटना हुई थी। विलायत जाने के पहले ही मेरा व्याह हुआ, और उसके बाद ही मेरे ससुर के साथ पिताजी का किसी बात पर झगड़ा हो गया। उस झगड़े ने धीरे-धीरे भयानक रूप धारण कर लिया। इसके सिवा मेरी स्त्री का दिमाग़ ख़राब होने की बात बताकर बाबूजी ने उसे अपने यहाँ रखना ठीक नहीं समझा; उसे उसके बाप के घर भेज दिया। विलायत से लौटने पर मैंने फिर उसको नहीं देखा।

अब शैलेश ने ज़बरदस्ती हँसने की कोशिश की, और फिर यों कहना शुरू किया—अजी ओ दिग्गज महाराज, बुद्धि के सागर! अगर उसका दिमाग़ सही होता, वह पगली न होती तो क्या वे लोग मेरे आने के बाद एक दफ़े उसे ससुराल भेजने की चेष्टा भी न करते? चाय की बैठक में तो कभी तुम्हें ग़ैरहाज़िर मैंने नहीं देखा। मगर याद रक्खो, अगर वह सचमुच ही आ गई तो फिर चाय पीने की आशा न रखना! वह गङ्गाजल और गोबर डालकर लीपने के

साथ ही तुम लोगों को भी झाड़ू की झड़प से साफ़ करके छोड़ेगी। यह सूचना मैं अभी दिये देता हूँ।

दिग्गज ने ज़ोर देकर कहा—कभी नहीं। ऐसा कभी न होगा।

किन्तु इस कथन का समर्थन और किसी ने नहीं किया—दिग्गज का साथ कोई न दे सका। अब इधर-उधर की मामूली दो-चार बातें होने के बाद "रात बहुत हो गई" कहकर सभी उठ खड़े हुए। महफ़िल उजड़ गई। अक्सर रोज़ इसी वक्त सभा-विसर्जन होता था, आज भी हुआ। मगर आज न-जाने किस प्रकार की विषादमयी मलिन छाया सी सबके चेहरों पर छा गई थी, जो अन्त तक जमी रही, मानो वह आज अपना अधिकार छोड़ना नहीं चाहती थी।

२

शैलेश से यह छिपा न रहा कि मित्रों ने तिबारा ब्याह करने के उसके प्रस्ताव का अनुमोदन तो किया नहीं; बल्कि मौन तिरस्कार के द्वारा वे धिक्कार भी दे गये! एक तरफ़ जैसे वह बेहद खिझलाहट से झुँझला उठा था, वैसे ही दूसरी तरफ़ लज्जा के मारे व्याकुल हो रहा था। मानो उसे मुँह दिखाना भारू हो उठा। अठारह वर्ष की उमर में शैलेश का पहला ब्याह हुआ था। उस समय उसकी स्त्री उषा केवल ग्यारह साल की थी। वह रूप-लावण्य-पूर्ण सुन्दरी

थी इससे कालीपद बाबू (शैलेश के पिता) थोड़ी ही क़ीमत लेकर लड़का बेचने को राज़ी हो गये थे। फिर भी लेने-देने के मामले में ही, शैलेश के विलायत चले जाने पर, दोनों समधियों में घोर विवाद हुआ। उसके बाद वही अंकुर बढ़कर भयानक विष-वृत्त बनकर विषम विद्वेष के फल फलने लगा। दोनों सम्बन्धी परस्पर मुँह देखने के भी रवादार न थे। ससुर ने अपनी बहू को, उसे ज़बरदस्ती ही कहना चाहिए, उसके मायके भेज दिया। फल यह हुआ कि पुत्र विलायत से लौटकर घर आया तो उस समय भी वे अपने हठ की धुन में आप पैग़ाम भेजकर बहू को बिदा कराने की हेठी नहीं स्वीकार कर सके। असल में उनके जी में बहू बिदा कराने की इच्छा भी न थी। उधर उमेश तर्कालङ्कार कुछ कम स्वाभिमानी न थे। उनकी प्रकृति में आन-बान की शान रखनेवाला आत्माभिमान व्याप्त हो रहा था। अपना और कन्या का सम्मान नष्ट करके, अपनी ओर से प्रार्थना-पूर्वक बिदा कराने का प्रस्ताव करके, स्वयं लड़की को ससुराल भेजना उमेश पण्डित को किसी तरह मन्ज़ूर न था। किसी के कहने से वे इस हीनता को सहने के लिए सहमत न हो सके; अपने विवेक की टेक पर टिके रहे। शैलेश को प्रवास में रहते समय, वहीं, इन बातों का अस्पष्ट आभास मिल गया। उड़ती ख़बरें उसके कानों तक पहुँचती रहती थीं। मगर विस्तार के साथ पूरा-पूरा ब्यौरा मालूम न था। जितना जान पाया,

उससे उसकी धारणा थी कि यह विवाद का साधारण कारण हटा देना कोई बड़ी बात नहीं। मेरे घर पहुँचने पर आप ही सब ठीक हो जायगा। किन्तु चार साल के लगभग बीतने पर जब वह घर लौट आया, तब उसके स्वभाव और प्रकृति में बहुत कुछ परिवर्त्तन हो गया था। इसी से जब और एक विलायत-पास बड़े विख्यात बैरिस्टर की विदुषी और विलायती अदब-क़ायदे जाननेवाली लड़की के साथ अपने ब्याह की सम्भावना देखी तब उसने उसके लिए चुपके से स्वीकृति दे दी। इसके बाद बहुत समय बीत गया। इस समय शैलेश के पिता काली बाबू भी दुनिया से कूच कर चुके हैं, और वृद्ध तर्कालङ्कार भी सबके सम्पर्क को तोड़कर स्वर्ग सिधार गये। इस अवधि में ससुराल की कोई ख़बर शैलेश के कानों तक न पहुँच पाई हो, यह बात नहीं है। शैलेश सब ख़बरें सुनता रहता था। उसकी धर्मपत्नी भाइयों के परिवार में है; जप-तप, पूजा-पाठ, गङ्गाजल, और गोबर के फेर में रहकर जीवन बिता रही है; उसकी 'शुचिबाई' पागलपन की सीमा तक पहुँच जाने से भाइयों के नाक में दम है इत्यादि। इसमें कोई बात शैलेश के कानों को सुखदायक न थी। फिर भी केवल इतनी सी सान्त्वना थी कि इस प्रकृति की स्त्रियों के चरित्र पर कोई कलङ्क नहीं लगाता। लगाने पर शैलेश को कितनी चोट पहुँचती, यह कहना कठिन ही है; किन्तु सौभाग्य से इस बदनामी का आभास तक किसी सूत्र से आज तक उसने नहीं सुना।

शैलेश सोचने लगा। भूपेन्द्र बाबू की उच्च शिक्षित कन्या की आशा इस समय छोड़नी ही होगी, बिना ऐसा किये काम नहीं चलेगा। मगर देहात से लाकर २५-२६ बरस की एक कुपढ़ औरत के हाथ में घर-गिरस्ती सौंप देने से इतने दिन की बाँधी गिरस्ती मटियामेट हो जायगी, इसमें कुछ शक नहीं। ख़ासकर सोमेन्द्र — लड़के—का क्या उपाय होगा? हर घड़ी उषा को यह याद हो आवेगा कि इसकी माता ही मेरे दुर्भाग्य और दुःख की जड़ थी। उस हालत में सौत के एकलौते बेटे को वह कितने भयङ्कर विद्वेष की दृष्टि से देखेगी, और उसके साथ कैसा बुरा व्यवहार करेगी, इस बारे में विचार करते-करते शैलेश शङ्का और आशङ्का के गढ़े में गिरकर ग़ोते खाने लगा।

उसकी बहन विभा की ससुराल श्यामबाज़ार में है। विभा के स्वामी बैरिस्टरी करते हैं। शैलेश ने इसी सिलसिले में सोचते-सोचते विचारा कि विभा के पास लड़का अच्छी तरह रहेगा। लेकिन फिर ख़याल आया कि यह व्यवस्था हमेशा के लिए, या बहुत दिन तक, नहीं की जा सकती। दिग्गज पण्डित को थप्पड़ मारते-मारते बेदम कर देने के लिए उसका जी चाहता था। इस बदमाश को वह बहुत दिनों से मुफ़्त चाय पिलाता और बिसकुट खिलाता आ रहा है; उसका बदला उसने इस तरह चुकाया!

असल में शैलेश आदमी बुरा न था। दोष इतना ही था कि उसकी प्रकृति कमज़ोर थी। इसी कारण असली

लज्जा की अपेक्षा चक्षुलज्जा (आँखों का सील) की मात्रा उसमें ज़बरदस्त देख पड़ती थी। विद्याभिमान के साथ ही उसे एक बड़ा भारी अभिमान यह था कि मैं जानकर किसी के ऊपर रत्ती भर भी अन्याय अथवा अत्याचार नहीं कर सकता। मित्र लोग मुँह से यद्यपि कुछ उसके विरुद्ध न कहेंगे, लेकिन मन ही मन उसे इस मामले में भारी अपराधी ठहरावेंगे; यह शैलेश का समझा हुआ सत्य था। यह बदनामी बरदाश्त करना उसके लिए असम्भव था।

सारी रात जागकर चिन्ता में पड़े रहने के बाद प्रातः-काल के समय एकाएक उसको बहुत ही सहज उपाय सूझ गया। उस पत्नी को लाने के लिए किसी को भेज दिया जाय। बस, सारी उलझन की गुत्थी सुलझी रक्खी है। एक तो वह आवेगी नहीं और अगर आई भी तो इस "मलिच्छी" कारखाने को देखकर दो ही दिन में भाग खड़ी होगी। तब फिर कोई मुझे दोष न दे सकेगा। इस बीच में दस-पाँच दिन के लिए सोमेन्द्र को उसकी बुआ के घर भेज दूँगा और ख़ुद और कहीं जाकर छिप रहूँगा। यह सीधी सी बात अब तक मुझे नहीं सूझ पड़ी! आश्चर्य है! बस, यही ठीक रास्ता है!

शैलेश ने कालेज से सात-आठ दिन की छुट्टी ले ली। इलाहाबाद में उसके एक बाल्यबन्धु रहते थे। अपने आने का समाचार तार के ज़रिए उनके पास भेज दिया। विभा

को चिट्ठी लिख दी कि उसने उषा को लाने के लिए नन्दीपुर आदमी भेजा है। अगर वह आवे तो विभा यहाँ आकर सोमेन्द्र को अपने साथ श्याम बाज़ार ले जाय। उसे प्रयाग से लौटने में सात-आठ दिन लग जायँगे, इत्यादि।

शैलेश का एक ममेरा भाई था, जो मेस में रहता और एक सौदागरी आफ़िस में काम करता था। उसे बुलाकर शैलेश ने कहा—देखो भूतनाथ, तुम्हें कल ज़रा नन्दीपुर अपनी भाभी को बिदा कराने जाना होगा।

भूतनाथ ने चकराकर पूछा—भाभी और कौन हैं भैया?

शैलेश—तू भी तो बारात में गया था, तुझे याद नहीं? उमेश भट्टाचार्य के घर बारात गई थी।

भूतनाथ—हाँ, याद आया। लेकिन एक बड़ी बेढब अड़चन है कि मैं वहाँ किसी को जानता-पहचानता नहीं। वे मेरे साथ फिर भला कैसे आवेंगी?

शैलेश—न आवें तो न सही। तेरी क्या हानि है? तेरे साथ पालकी-कहार और महरी भी जायगी। आना मञ्जूर न करे तो फ़ौरन् चल देना।

भूतनाथ आश्चर्य के मारे तनिक चुपका खड़ा रहा। फिर बोला—अच्छा, जाऊँगा। मगर वे लोग कहीं मार-पीट न करने लगें!

शैलेश ने उसे ख़र्च के लिए रुपये और एक चाभी देकर कहा—आज ही रात की गाड़ी से मैं इलाहाबाद ज़रूरी काम

से जा रहा हूँ। सात-आठ दिन में आऊँगा। अगर तुम्हारी भाभी आवे तो उसे यह चाभी देकर सामने की आलमारी दिखा देना। घर के खर्च के लिए रुपये-पैसे इसी में हैं। इसमें पूरा एक महीना चलाना होगा। कह देना।

भूतनाथ राज़ी होकर बोला—अच्छा। लेकिन एकाएक तुम्हारा यह इरादा क्यों हुआ मँझले दादा? नहर काट-कर घर में मगर तो नहीं ला रहे हो? सोच लो।

शैलेश चिन्तित मुख किये कुछ देर चुप रहने के बाद लम्बी साँस छोड़कर बोला—वह नहीं आवेगी, यह तय है। लेकिन फिर भी लोक और धर्म के ख़याल से कर्तव्यपालन के लिए कुछ उद्योग तो करना चाहिए! जो ख़बर हो, श्याम-बाज़ार में दे देना। सोमेन को विभा आकर अवश्य ले जाय, यह कहते जाना।

रात को पञ्जाब-मेल से शैलेश इलाहाबाद को रवाना हो गया।

३

कई दिन के बाद एक रोज़, दोपहर के वक़्, घर के सदर दरवाज़े पर एक मोटर आकर ठहर गई। दो मिनट के बाद ही एक बाईस-तेईस बरस की युवती भीतर घुसकर बैठक में पहुँची। फ़र्श पर कार्पेट बिछा था। उस पर बैठा हुआ सोमेन्द्र एक बड़े भारी जिल्ददार अलबम को उलट-पुलटकर

अपनी नई और नवागत मा को चित्रों की सैर करा रहा था। उसी ने, युवती की ओर नज़र पड़ते ही, महा आनन्द के साथ मा से परिचय कराते हुए कहा—मा, बुआजी आई हैं।

उषा उठकर खड़ी हो गई। वह बिलकुल सादे फ़ैशन की चौड़ी लाल किनारीवाली धोती और हाथ तथा गले में मामूली दो-चार आभूषण पहने थी। फिर भी उसी लिबास में रूप फटा पड़ता था। उस रूप को देखकर विभा सन्नाटे में आ गई।

पहले पहल उषा ही बोली। तनिक मुसकाकर उसने लड़के से कहा—तुमने बुआजी को प्रणाम नहीं किया भैया!

सोमेन के लिए यह शिक्षा शायद बिलकुल नई थी। उसने झट झुककर बुआ के बूट-मण्डित पैर छूकर किसी तरह पैर छूने की रस्म अदा कर दी। उषा बोली—खड़ी क्यों हो ननदजी, बैठो न।

विभा ने पूछा—आप कब आईं?

उषा बोली—सोमवार को आई थी, आज बुधवार है, तीन दिन हुए।—लेकिन यों खड़े रहने से कैसे काम चलेगा बहन, बैठ जाओ।

विभा असल में मेल या मित्रता करने को न आई थी। वह तो घर ही से मन को तीखा-रूखा बनाकर चली थी। बोली—बैठने की फ़ुरसत नहीं, बहुत काम हैं। मैं सोमेन को लेने आई हूँ।

उषा ने इस रूखेपन का उत्तर हँसकर ही दिया। कहा—मैं अकेली भला कैसे रहूँगी बहन! मायके में भावजों के लड़के-बाले मेरे ही हाथ के पाले-पोसे हैं। कोई एक आदमी पास न रहने से मेरी ज़िन्दगी भारू हो जाती है ननदजी।

यह कहकर उषा फिर हँस दी।

इस हँसी का उत्तर विभा ने कड़वे कण्ठ-स्वर में ही दिया। लड़के को बुलाकर उससे बोली—तुम्हारे बाबूजी ने तुमसे मेरे मकान में जाकर रहने को कहा है। मेरे पास बरबाद करने के लिए फ़ाल्तू वक्त नहीं है सोमेन। जाओ तो, जल्दी से अपने सब कपड़े-लत्ते पहन लो। मुझे अभी न्यूमार्केट जाना है।

मा और बुआ, दोनों के बीच में पड़कर सोमेन चकरा गया। उदास उतरे हुए चेहरे से उसकी परेशानी झलक रही थी। डरते-डरते उसने कहा—मा जाने को मना जो कर रही हैं बुआजी?

उसका सङ्कट देखकर उषा चटपट कह उठी—जाने के लिए मैं तुमको मना नहीं करती भैया; मैं तो यही कहती हूँ कि तुम्हारे चले जाने पर अकेले घर में रहने में मुझे बड़ा कष्ट होगा।

लड़के ने मुँह से इसका कुछ उत्तर नहीं दिया। वह बिलकुल पास आकर, सौतेली मा का आँचल पकड़कर, खड़ा हो रहा। लड़के के सिर के बालों के बीच उँगलियाँ चलाती

और हँसती हुई उषा ने ननद से कहा—वह जाना नहीं चाहता ननदजी।

लज्जा और क्रोध के मारे विभा का चेहरा काला हो उठा। अत्यन्त सभ्य समाज की ऊँचे दर्जे की हज़ार शिक्षा पाने पर भी वह अपने को नहीं सँभाल सकी—आपे से बाहर हो गई। उसने कहा—लेकिन उसे जाना ही चाहिए। मुझे दृढ़ विश्वास है कि आपकी अनुचित शह न पाता तो यह बाप की आज्ञा का पालन अवश्य करता।

उषा के होंठ के दोनों सिरे तनिक कठिन होने के सिवा उसके चेहरे पर और कुछ भी भावान्तर नहीं दिखाई पड़ा। उसने कहा—हम बूढ़े आदमी ही अपने उचित कर्तव्य का पालन नहीं कर पाते बहन, सोमेन तो बच्चा ठहरा। वह अभी समझता ही क्या और कितना है? और तुमने यह जो कहा कि मैं लड़के को बेजा सिर चढ़ाती या शह देती हूँ, सो इस बारे में मेरा यही कहना है कि मैंने अनेक लड़कों को अपनी देखरेख में रखकर सयाना किया है। यह सब मैं सँभालना जानती हूँ। तुम लोगों को दुश्चिन्ता न करनी चाहिए।

विभा ने कठोर होकर कहा—तो फिर मैं दादा को चिट्ठी लिख दूँगी?

उषा बोली—लिख देना। लिखना, उनके इलाहाबाद के हुकुम की बनिस्बत अपना कलकत्ते का हुकुम ही मैं बड़ा

समझती हूँ। लेकिन देखो बहन विभा, मैं नाते में और उम्र में भी, तुमसे बड़ी होती हूँ। इस कारण इस बात पर तुम मुझसे रूठ न सकोगी।

अब उसने ज़रा हँसकर कहा—आज तुम रूठकर ज़रा बैठी तक नहीं, लेकिन मैं तुमसे इतना कहे रखती हूँ कि एक दिन तुम अपनी इच्छा से ख़ुद आकर अपनी इसी भाभी के पास बैठोगी।

विभा ने कुछ उत्तर न देकर कहा—आज मुझे अधिक अवकाश नहीं है—प्रणाम।

विभा तेज़ी के साथ चल खड़ी हुई। घर से बाहर आकर मोटर पर बैठने पर सहसा ऊपर की ओर आँखें उठते ही देखा कि बरामदे का कटहरा पकड़े हुए उषा, सोमेन को लिये, उसी को ओर ताकती हुई पत्थर की मूर्त्ति सी खड़ी है।

४

सात दिन की छुट्टी थी; किन्तु दो हफ़्ते के लगभग इलाहाबाद ही में शैलेश ने बिता दिये। इसके बाद एक दिन कलकत्ते को चल पड़ा और दोपहर के समय अचानक घर के भीतर दाख़िल हुआ। सामने के रुख़ में नीचेवाले बरामदे में बैठा हुआ सोमेन बाँस की तीलियाँ, रङ्ग-बिरङ्गे काग़ज़ के ताव, आटे की लेई और डोरी वग़ैरह लिये अपनी ही धुन में डूबा हुआ था; इसी से पहले पिता का आना वह नहीं लख

पाया। किन्तु नज़र पड़ते ही उसने पिता की संवर्द्धना की; फिर लज्जा-सहित सङ्कोच के साथ पैरों के पास सिर रखकर प्रणाम किया। अपने बड़ों को प्रणाम करने के अभ्यास में अभी वह पक्का नहीं हुआ, यह उसका चेहरा देखकर ही मालूम हो गया। प्रणाम करने का यह तरीक़ा शैलेश की निगाह में बुरा नहीं जँचा मगर विस्मयजनक ज़रूर जान पड़ा।

मगर उसी दम तीली, काग़ज़, लेई वग़ैरह पर निगाह पड़ गई। बाप ने बेटे से पूछा—यह क्या हो रहा है सोमेन ?

सोमेन ने भीतर का रहस्य सहज में जल्दी ज़ाहिर करना ठीक न समझकर कहा—भला बताओ तो बाबूजी, यह क्या है ?

बाप ने कहा—मैं क्या जानूँ ?

लड़का ताली बजाकर बड़े आनन्द के साथ बोला—यह अक्कासी दिया है बाबूजी!

शैलेश ने कहा—अक्कासी दिया! अक्कासी दिया क्या होगा रे ?

इस दीपक का अद्भुत ब्यौरा सोमेन ने आज ही सबेरे सुना था। वही बाप को सुनाने लगा—बाबूजी, आज संक्रान्ति है कि नहीं! कल शाम को एक ऊँचे बाँस में बाँधकर टाँग देना होगा। मा कहती हैं—मेरे दादा-परदादा वग़ैरह जो पुरखे स्वर्ग में हैं, उन्हीं के लिए यह रोशनी की जाती है। इससे ख़ुश होकर वे हमें असीसते हैं।

शैलेश का मिज़ाज यों ही गरम हो रहा था, उस पर ये ख़ुराफ़ात ख़यालात जो लड़के के मुँह से सुन पड़े तो आग में घी पड़ गया। उसने ठोकर मारकर तीली वग़ैरह सब फेंक दिया, और धमकाते हुए कहा—असीसते हैं! सब वही कुसंस्कार की बातें सीखा करता है! जा, अपना पाठ पढ़।

इतनी साध का वह आकाश-दीप टूट-फूट जाने से सोमेन रुआसा हो गया—आँखों में आँसू भर आये। ऊपरी मञ्ज़िल की किसी जगह से बेहद मीठी आवाज़ में सुनाई पड़ा—बेटा सोमेन, कल बाज़ार से मैं इससे भी अच्छा आकासी दिया तुम्हें मँगवा दूँगी। आओ, मेरे पास चले आओ।

लड़का आँखें पोंछता हुआ ऊपर चला गया। शैलेश खीझ उठा, और बिगड़ गया। किसी ओर न देखकर वह सीधा अपने पढ़ने के कमरे में घुस गया। उसी घड़ी चपरासी बुलाने की घण्टी टन्-टन्-टन् करके बज उठी। मगर कोई न बोला।

शैलेश ने पुकारा—अब्दुल्ला!

अब्दुल्ला भी न आया।

फिर पुकारा—गिरधारी! गिरधारी!

अबकी गिरधारी के बदले बङ्गाली नौकर गोकुल ने जाकर, पर्दा हटाकर, भीतर सिर बढ़ाकर कहा—जी सरकार!

शैलेश ने ज़ोर से डाँटकर कहा—जी सरकार? सब साले क्या मर गये?

गोकुल—जी नहीं।

शैलेश—जी नहीं ? अब्दुल्ला कहाँ है ?

गोकुल—माजी ने उसे छुट्टी दे दी है—वह घर चला गया।

शैलेश—छुट्टी दे दी है। घर चला गया!—और गिरधारी कहाँ गया ?

गोकुल ने बतलाया कि वह भी छुट्टी पाकर अपने गाँव चला गया। शैलेश सन्नाटे में आकर बोला—घर में क्या कोई और आदमी नहीं है ?

गोकुल ने गरदन हिलाकर कहा—जी नहीं, और तो सब लोग हैं।

शैलेश—वे ही क्यों रह गये?—जा, दूर हो—

शैलेश ने आप ही अपने हाथ से जूते खोले, कोट उतारकर टेबिल के ऊपर ही डाल दिया। अरगनी से धोती लेकर पहनी और ट्राउज़र खोलकर दूर की एक कुर्सी पर ताककर फेंका, पर वह बीच ही में नीचे गिरकर मिट्टी में लिथरने लगा। नेकटाई-कालर वग़ैरह सब सामान इधर-उधर डालकर अपनी कुर्सी पर जाकर बैठते ही ठीक सामने टेबिल के ऊपर रक्खी हुई एक छोटी सी कापी दिखाई पड़ गई। ऊपर के पृष्ठ पर लिखा था—"घर के ख़र्च का ब्यौरेवार हिसाब।" खोलकर देखा, सुन्दर स्पष्ट अक्षरों में औरतों के हाथ की लिखावट देखते ही बनती है। रोज़ाना ख़र्च तफ़सीलवार लिखा गया है—जैसे मछली इतनी, साग-भाजी इतनी, चावल

इतने, दाल इतनी इत्यादि। एकाएक दरवाज़े का पर्दा हटाने का शब्द हुआ, जिससे चौंककर देखने पर एक औरत भीतर आती नज़र आई। वह स्त्री और चाहे जो हो, नौकरानी नहीं है, यह पल भर की झलक में ही शैलेश ने जान लिया। साथ ही वह मानो हिसाब की उसी कापी के भीतर एकदम डूब गया। आनेवाली ने शैलेश के पैरों के पास सिर रख-कर प्रणाम किया। फिर उठकर खड़ी हो गई और बोली—तुम इतने वक़्त क्या चाय पियोगे? मगर फिर तुमसे रोटी न खाई जायगी।

शैलेश ने कहा—रोटी न खाऊँगा।

उषा—न खाना सही, हाथ-मुँह धोकर ऊपर तो चलो। बे-वक़्त नहाने का अब कुछ प्रयोजन नहीं। मैं जल-पान का सब सामान ठीक करके रख आई हूँ; और कुमुदा से शरबत बनाने को कह आई हूँ। चलो।

शैलेश—अभी रहने दो।

उषा ने कहा—अजी साहब, मैं उषा हूँ, कोई बाघ या भालू नहीं। मेरी ओर आँख उठाकर देखोगे तो कोई छी-छी न करने लगेगा।

शैलेश—मैंने क्या तुमको बाघ-भालू कहा है?

उषा—तो फिर इस तरह भागे-भागे क्यों फिरते हो?

शैलेश—मुझे काम था, इसी लिए जाना पड़ा।—हाँ, तुम विभा के साथ झगड़ा क्यों कर बैठीं?

उषा—ये तुम्हारी बनाई बातें हैं। विभा ने तुमको कभी यह न लिखा होगा कि मैंने उनसे लड़ाई-झगड़ा किया है।

शैलेश—तुमने अब्दुल्ला को निकाल बाहर किया?

उषा—यह तुमसे किसने कहा? मैंने उसे निकाल नहीं दिया। उसे साल भर से तनख़्वाह नहीं मिली थी, और घर जाने को भी वह चटपटाया करता था। मैंने तनख़्वाह चुकाकर उसे छुट्टी दे दी।

शैलेश ने विस्मित होकर कहा—कुल तनख़्वाह चुका दी? तब तो अब वह वापस आ चुका!—अच्छा गिरधारी क्यों गया?

उषा—यह तो तुम्हारी बड़ी ज़बरदस्ती है जी! नौकर-चाकरों की तनख़्वाह न देना और अटकाये रखकर घर न जाने देना कहाँ का न्याय है? यह क्यों, क्या उन लोगों के घर-बार और परिवार कुछ नहीं है? मैंने उसे महीना देकर बरख़्वास्त कर दिया।

शैलेश—ख़ूब किया! अब इस घर को वशिष्ठ मुनि का आश्रम बना डालो।

शैलेश हिसाब की कापी पर नज़र रक्खे हुए ही बातचीत कर रहा था। एकाएक एक बड़ी सी रक़म पर निगाह पड़ते ही चौंककर बोला—यह कैसी रक़म है? चार सौ छः रुपये—

उषा ने उत्तर दिया—ये रुपये मैंने मोदी को दिये हैं। अभी शायद दो सौ के लगभग बाक़ी पड़े हैं। अगले महीने में वे भी देने को कह दिया है।

शैलेश अकचकाकर बोला—छः सौ रुपये मोदी के बाक़ी पड़े थे !

उषा ने हँसकर कहा—पड़े न रहें ? कभी अदा न करोगे, हिसाब न देखना चाहोगे, तो फिर और क्या होगा ? दो साल से मोदी का हिसाब चढ़ता चला आता था—छः सौ की रक़म सिर पर लद गई थी।

इतनी देर बाद शैलेश ने सिर उठाकर देखा, और कहा—तुमने मोदी का दो साल का सब हिसाब देखा और जाँचा था क्या ?

उषा ने सिर हिलाकर कहा—तो और उपाय ही क्या था ?

शैलेश चुप होकर बैठा रहा। मगर पाँच ही मिनट का परिचय होने पर भी उषा से यह छिपा नहीं रहा कि शैलेश के चेहरे पर लज्जा की छाया पड़ रही है। उसने पूछा—क्या सोचने लगे, बताओ ?

शैलेश ने हँसने की कोशिश करके कहा—सोचता यह हूँ कि रुपये जो कुछ थे, सो सब तुमने ख़र्च कर डाले, अब क्या होगा ? तनख़्वाह मिलने में अभी १५-१६ दिन की देर है।

उषा ने सिर हिलाकर कहा—मैं क्या नादान छोकरी हूँ, जो इन बातों पर विचार किये बिना सबका हिसाब चुका देती और आप मुफ़लिसी की मुसीबत मोल लेती ? पन्द्रह दिन क्या, महीने-डेढ़ महीने तक मैं तुमसे ख़र्च के लिए रुपये माँगने

न आऊँगी। लेकिन यह क्या गोलमाल डाल रक्खा है तुमने? अहीर कहता था कि उसके लगभग डेढ़ सौ रुपये चाहिएँ। धोबी का हिसाब पचास रुपये से ज़्यादा ही होगा। अलग-अलग कई दर्ज़ियों का हिसाब बेहिसाब बढ़ा हुआ है।

दर्ज़ी की दूकान की कितनी रक़म बाक़ी पड़ी है, वही जाने। मैंने सब हिसाब उतारकर भेजने के लिए कहला भेजा है।

शैलेश अत्यन्त भय-विह्वल होकर बोला—यह तुमने क्या किया? वे लोग अगर हज़ार रुपये बाक़ी बतलावें तो तुम कहाँ से दोगी भला?

उषा ने वैसे ही निश्चिन्त भाव से उत्तर दिया—एकमुश्त दे डालने की बात तो मैंने कही नहीं है—तीन-चार महीने में चुकता कर दूँगी। और किसी का क़र्ज़ा तो नहीं सिर पर चढ़ा रक्खा है? मुझसे छिपाना नहीं।

शैलेश ने पत्नी के चेहरे पर स्थिर दृष्टि स्थापित करके, ज़रा ठहरकर, धीरे-धीरे कहा—परसाल गर्मियों की छुट्टी में शिमले जाते वक़्त पुरनोट लिखकर एक आदमी से दो हज़ार रुपये क़र्ज़ लिये थे। असल की कौन कहे, सूद तक नहीं दिया—एक रुपया भी नहीं दे सका हूँ।

उषा गाल पर हाथ रखकर अचम्भे में आकर बोली—तुमने तो कमाल कर दिया!—इतना कहने के साथ ही उषा हँस पड़ी, और कहने लगी—देखती हूँ, तुम भी एक साल के

पहले मुझे क़र्ज़े से छुटकारा न पाने दोगे। ख़ैर, अब और किसी का देना तो नहीं बाक़ी है ?

शैलेश—जान पड़ता है, और किसी का नहीं है। मामूली दस-बीस रुपये का देना शायद निकल भी आवे, बड़ी रक़म और नहीं है। लेकिन मैंने तो सोच रक्खा था कि इस जन्म में यह ऋण न चुका पाऊँगा।

उषा—सच कहते हो ? इस बारे में सचमुच कभी तुम सोचा करते हो ?

शैलेश—सोचता नहीं हूँ ? सोचता तो इतना हूँ कि अक्सर आधी-आधी रात तक नींद नहीं आती। कभी-कभी तो सोते-सोते बारह-एक बजे नींद उचट जाती है, और उलझन के मारे दम घुटने लगता है ! तनख़्वाह में तो महीने भर का ख़र्च ही नहीं पूरा होता, हर महीने ख़र्च की तंगी रहती है। लेकिन देखो, मुझे निश्चिन्त करने के लिए झूठा दिलासा देकर बहलाना नहीं। क्या सचमुच तुम यह आशा करती हो कि सब क़र्ज़ अदा कर पाओगी ?

एकाएक उषा की आँखों में आँसू आ गये। जिस स्वामी को आध घण्टा पहले वह पहचानती भी नहीं थी, यह कहना अत्युक्ति न होगा, उसी के लिए उसके हृदय में सच्ची सहानुभूति का भाव जाग उठा। किन्तु उस वेदना की कसक पर हँसी का पर्दा डालती हुई वह कहने लगी—तुम तो बड़े अच्छे आदमी हो ! गिरस्ती का ख़र्च चलाने के लिए क़र्ज़ा हो गया

तो क्या उसे अदा न करना होगा? मगर चिन्ता की बात क्या है। इतनी मामूली रक़म चुकाते मुझे कै दिन लगेंगे?

शैलेश—मगर सबको बड़ी तकलीफ़ होगी—

उषा ने ज़ोर देते हुए कहा—किसी को न होगी। तुमको तो शायद ख़बर भी न होगी कि कहीं कुछ परिवर्त्तन हुआ है।

शैलेश स्थिर भाव से चुपचाप वहीं बैठा रहा। उसे जान पड़ने लगा, मानो अर्से की बदली में अचानक आकाश की किसी सन्धि से धूप की धारा सी उसके शरीर पर आ गिरी।

५

जमा होते-होते कार्ड और लिफ़ाफ़ों—चिट्ठियों—का ढेर लग गया था। उन सबको पढ़कर उनका जवाब लिखने, अख़बारों को एक-एक करके खोलने, उनके ऊपर सरसरी नज़र डाल लेने और इसी तरह के अन्य छोटे-मोटे काम ख़तम करने में ही शैलेश को शाम हो गई। काम में लगे हुए एकाग्र शैलेश का चेहरा बाहर से, पर्दे की सन्धि से, देखने पर इस कर्तव्य की निष्ठा और पूर्णरूप से मन की तल्लीन अवस्था के ऊपर साधारण अनाड़ी आदमी के हृदय में असाधारण श्रद्धा और आदर की धारणा उत्पन्न होना ही स्वाभाविक होगा। किन्तु इन प्रोफेसर साहब की प्रतिष्ठा पर प्रहार करना या उनके ऊपर होनेवाली श्रद्धा के विरुद्ध युद्ध ठानना इस कहानी के लिए प्रयोजनीय योजना नहीं है। यहाँ

इतना ही कह देने से काम चल जायगा कि किसी प्रोफ़ेसर को छल-कपट-पटुता के मामले में, उसके प्रोफ़ेसर होने के कारण ही, दुनिया में कोई भी अचानक परास्त या पश्चात्पद कर देगा, यह आशा केवल दुराशा है। हाथ का काम निपटाकर शैलेश ने ख़ुद ही खटका दबाकर बिजली की बत्ती जला दी, और एक मोटी सी जिल्दवाली फ़िलासफ़ी की पुस्तक लेकर पढ़ना शुरू कर दिया। मानो इस समय उसके पास एक मिनट का समय भी फ़ज़ूल गँवाने के लिए नहीं है। लेकिन पहले और किसी दिन शाम के बाद उसको ऐसा 'कुकर्म' करते न देखा जाता था।

शैलेश ने एकाग्र मन से पढ़ना शुरू किया ही था कि बाहर पर्दे की आड़ से कुमुदा ने पुकारकर कहा—बाबूजी, माजी कहती हैं कि आपकी थाली परोसी रक्खी है, आइए।

शैलेश ने घड़ी पर नज़र डालकर कहा—यह तो मेरे भोजन का समय नहीं है। अभी ५० मिनट की देर है।

कुमुदा ने पूछा—तो ढककर रख देने को कह दूँ?

शैलेश ने कहा—हाँ, यही ठीक है। अब्दुल्ला के न रहने से ही इस घर के हर एक काम में गड़बड़ हो रही है।

दासी और कुछ न पूछ करके चली जा रही थी; शैलेश ने बुलाकर कहा—सब सामान उठाकर ढकने और रखने में भी हैरानी होगी। अच्छा, जाकर कह दे, मैं आता हूँ।

आज भोजन की कोठरी में कुर्सी-मेज का बन्दोबस्त न था। शैलेश ने कोठे पर आकर देखा, उसके सोने के कमरे के सामने बन्द बरामदे में आसन बिछा है; सोलहों आने स्वदेशी आहार का प्रबन्ध किया गया है--पुराने ज़माने में बरते जानेवाले रकाबी, गिलास, कटोरी, पथरी, लोटा वग़ैरह बर्तन निकालकर माँज-धो डाले गये हैं। वे ऐसे चमक उठे हैं कि धूप पड़ने पर आँखें चौंधिया जाती हैं। थाल में भोजन-सामग्री सुन्दर सुरुचि-सङ्गत ढङ्ग से सजा रक्खी है। ख़ुशरङ्ग पालिशदार प्यालियों की पाँति में भाँति-भाँति के सालन, तरकारी, चटनी, मुरब्बे, मिठाई वग़ैरह चीज़ें चुन दी गई हैं। कुछ ही दूर पर, खुले फ़र्श पर, बैठी हुई उषा से सटा हुआ सोमेन भी सामने मौजूद था।

शैलेश ने आसन पर बैठकर कहा—यह तो मैं जानता हूँ कि तुम मेरे साथ बैठकर खा नहीं सकती; लेकिन सोमेन के बारे में क्या कहती हो? क्या उसे भी न खाना चाहिए?

इसका उत्तर लड़के ही ने दिया। बोला—मैं तो रोज़ मा के साथ खाया करता हूँ बाबूजी।

शैलेश ने भोजन का बहुत बड़ा आयोजन देखकर कहा—ये तरह-तरह की बहुत सी चीज़ें किसने बनाई हैं? तुम्हीं ने?

"जी।"

"जान पड़ता है, तुमने महराज को भी छुड़ा दिया। जहाँ तक मुझे ख़याल है, उसकी तनख़्वाह तो सब दे दी जाती

थी। उसे क्या एक साल की पेशगी तनख़्वाह देकर विदा किया?"

मुख की हँसी को मुख ही में छिपाकर उषा बोली—दरकार होने पर नौकर-चाकरों को पेशगी तनख़्वाह भी देनी पड़ती है, सिर्फ़ बाक़ी रखने से ही काम नहीं चलता। मगर वह कहीं गया नहीं, यहीं मौजूद है। बुला दूँ?

शैलेश ने फ़ौरन् सिर हिलाते हुए कहा—नहीं जी, रहने दो। उसे देखने के लिए मैं बेचैन नहीं हूँ। मेरा मतलब इतना ही है कि बीच-बीच में किसी-किसी दिन उसको भी रसोईं करने देना; नहीं तो जो कुछ सीखा है, वह भूल जाने से बेचारे का बड़ा नुक़सान होगा।

आज भोजन करने बैठकर जो चीज़ें खाने को मिलीं, वे शैलेश को इतनी रुचीं कि वही जानता था। मा जब जीवित थीं उस ज़माने की याद आज हो आई। सामने की प्याली हाथ में उठाकर शैलेश ने कहा—वाह, बड़ी बढ़िया महक आ रही है। गोसाईं (वैष्णव) लोग मांस नहीं खाते। वे कटहल की तरकारी में गरम मसाला डालकर उसे "गाछ-पाँठा"* कहकर खाते हैं। मेरी रुचि इतने ऊँचे दर्जे की नहीं है, इसी से कहता हूँ कि कटहल की तरकारी बल्कि मुझे हज़म हो जायगी, मगर गाछपाँठा नहीं।

---

* गाछ = पेड़ और पांठा = बकरी का बच्चा।

उषा खिलखिलाकर हँस पड़ी। सोमेन हँसी का कारण कुछ न समझ सका। तब मा की गोद में लुढ़ककर उसके मुँह की ओर ताकते हुए उसने पूछा—गाछ-पाँठा क्या चीज़ है मा?

उत्तर में उषा ने लड़के को छाती के पास और ज़रा खींच लाकर स्वामी से यही कहा—पहले खाकर तो देखो।

शैलेश ने मांस का एक टुकड़ा मुँह में रखकर कहा—नहीं जी, यह तो चौपाया-पाँठा ही है। ख़ूब बना है। मगर यह तो कहो कि यह सब पकाना तुमने किस तरह सीखा?

उषा का चेहरा दमक उठा। बोली—गोश्त वग़ैरह पकाना क्या तुम्हारा मुसलमान बबर्ची अब्दुल्ला ही जानता है जी? मेरे बाप थे सिद्धेश्वरी देवी के पुजारी। तुमने क्या यह समझा था कि मैं गोसाईं के घर से आ रही हूँ?

शैलेश—इस प्याली को ख़ाली करने के बाद भला किसी की क्या मजाल जो ऐसी बात ज़बान पर ला सके। किन्तु मेरे यहाँ देवी सिद्धेश्वरी हैं नहीं, फिर यह कैसे नसीब होगा? मुझे क्या रोज़ यह पदार्थ मिलेगा?

उषा—कमी काहे की है जिसके कारण तुम्हें न नसीब होगा, सुनूँ तो सही?

शैलेश—अब्दुल्ला के जाने का रञ्ज तो मैं आज ही पौने सोलह आने भूल चला हूँ। मगर लोगों को देना—

उषा ने बिगड़कर कहा—मैंने क्या तुमसे यह कहा है कि स्वामी और पुत्र को खिलाये-पिलाये बिना—उनका पेट

काटकर—क़र्ज़ा चुकाऊँगी ? देना जो कुछ है उसकी चर्चा अब तुम ज़बान पर भी न लाने पाओगे, यह मैं तुमसे कहे देती हूँ।

शैलेश ने कहा—तुमको कहना नहीं पड़ेगा। उसकी ज़रूरत ही न होगी। किसी के क़र्ज़ की याद करना अथवा ज़बान पर उसका ज़िक्र लाना मेरी आदत ही में नहीं। किन्तु—

उषा ने कहा—इसमें 'किन्तु' 'परन्तु' की गुञ्जाइश नहीं है। पेट के खाने के लिए तो क़र्ज़ा हुआ नहीं है ?

शैलेश—मैं क्या जानूँ उषा, किसलिए, किस तरह यह क़र्ज़ हुआ !

उषा ने कहा—और किसी दिन तुमको यह जानने की कोई ज़रूरत भी नहीं। दया करके केवल यह करना कि मुझे पगली कहकर फिर न कहीं खेद देना।

शैलेश चुपचाप सिर झुकाये भोजन करने लगा। सोमेन बोला—अब चलकर तुम भी न खाओ मा ! हाँ, कल की वह जटाई गीध की कहानी आज पूरी करनी पड़ेगी तुमको। जटाई के बेटे ने तब फिर क्या किया मा, कहो ?

शैलेश ने सिर उठाकर कहा—जटाई का लड़का चाहे जो करे, लेकिन यह लड़का तो, देख पड़ता है, पूरी तौर से तुम्हारे गले का हार हो गया है।

लड़के के सिर पर हाथ फेरती हुई उषा चुपकी बैठी रही।

शैलेश—इसका कारण क्या है, जानती हो ?

उषा—कारण और क्या है; मा रही नहीं, छोटा बच्चा अकेला घर में—

शैलेश—यह कारण है सही, मगर मुख्य कारण यह है कि मा के रहने पर भी इतना अधिक प्यार-दुलार शायद उस समय—कभी—इसको नहीं नसीब हुआ।

उषा का मुँह लाल हो उठा। उसने कहा—तुम्हारी भी बातें दुनिया से निराली होती हैं?—हाँ, और थोड़ा गोश्त लोगे?—अच्छा, न खाओ, मेरे सिर की क़सम, उठना नहीं। देखो, कुछ न खाओ, लेकिन यह मिठाई—दो ही तो डली हैं—न छोड़ जाना! दिन-भर के बाद खाने को बैठे हो, इसका तो ज़रा ख़याल करो।

शैलेश मुँह फैलाकर आश्चर्य के साथ उषा के मुँह की ओर ताकता रहा। खाने के लिए इतना ज़बरदस्त तक़ाज़ा, ऐसा आत्मीयताव्यञ्जक अनुरोध और आग्रह, हृदय की व्यग्रता के साथ सिर की क़सम देना—शैलेश के लिए कल्पना से परे, और आशातीत, अप्राप्य, अलौकिक, अपूर्व आनन्द देने-वाला था। उसे जान पड़ा, मानो बीत चुके बहुत से वर्षों का बड़ा भारी अन्तर किसी माया-मन्त्र के ज़ोर से मिट गया है, और बचपन में सुने हुए किसी गीत की टेक की मीठी तान कान में पड़ गई। शैलेश आप भी अपनी मा का एकलौता बेटा था। अकस्मात् यही बात याद करके उसको जान

पड़ा मानो उसके हृदय में भीतर धड़कन होने लगी। आगे की मिठाई छोड़कर उठ जाने की शक्ति ही हाथ-पैरों में न रह गई। मिठाई की डली से ज़रा सा टुकड़ा तोड़कर मुँह में रख लिया, और फिर कोमल स्वर से कहा—किसी तरफ़ का, किसी बात का कुछ भी हिसाब अब मैं न रक्खूँगा, न करूँगा—समझी उषा? यह बोझ एकदम तुमको सौंपकर मैं निश्चिन्त होना चाहता हूँ।

६

सात दिन किधर किस तरह बीत गये; कुछ जान ही न पड़ा। फिर एतवार आ गया, मगर शैलेश को फ़ुरसत न मिली। सबेरे उठते ही उषा ने कहा—तुमसे रोज़ कहती हूँ, मगर तुम सुनते ही नहीं। आज तनिक ननदजी के घर तो जाओ। भला वे क्या सोचती होंगी! तुम क्या सचमुच मेरे साथ उनका झगड़ा करा देना चाहते हो जी?

शैलेश ने मन में बहुत शर्मिन्दा होकर कहा—कालेज में आजकल इतना ज़्यादा काम करना पड़ता है कि—

उषा—सो तो मैं जानती हूँ। कालेज से लौटते वक़्त भी इसी से शायद एक दफ़े उस तरफ़ नहीं जा सके?

शैलेश—मगर सोचो तो सही, लौटते वक़्त कितना थक जाता हूँ! यह तो तुमको कुछ मालूम ही नहीं। तुमको तो कुछ लड़कों को पढ़ाना नहीं पड़ता, क्या जानो?

उषा ने हँस दिया, और कहा—तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, आज एक दफ़े हो आओ वहाँ। रविवार को भी लड़कों को पढ़ाने का बहाना करके टाल जाओगे तो विभा फिर इस जन्म में कभी मेरा मुँह न देखेगी।

अब उषा ने साईस को बुलवा भेजा। उसे गाड़ी जोतने का हुक्म देकर कहा—बाबू साहब को श्याम बाज़ार पहुँचाकर तुम गाड़ी लेकर लौट आना। गाड़ी की मुझे ज़रूरत है।

जाते समय शैलेश ने लड़के को साथ ले जाना चाहा, तो सोमेन सौतेली मा के पैरों से सटकर, मुँह बनाकर, खड़ा हो रहा। बुआ के पास जाने के लिए वह किसी दिन उत्साह का अनुभव नहीं करता था। ख़ास कर उस दिन की बातचीत याद करके उसे बेहद डर लगने लगा। उषा ने उसे गोद के पास खींच लाकर हँसते हुए कहा—सोमेन को रहने दो; वह और किसी दिन मेरे साथ हो आवेगा।

शैलेश ने कहा—तुमने ताड़ लिया कि यह विभा के यहाँ जाना नहीं चाहता।

"तुमको देखकर ही थोड़ा सा अन्दाज़ कर रही हूँ।" कहकर हँसती हुई उषा लड़के को लिये ऊपर चली गई।

शैलेश के स्नान-भोजन करके श्याम बाज़ार से घर लौटने में ढाई बजे के लगभग दिन बीत गया। विभा, बहनोई क्षेत्र-मोहन बाबू और उनकी १७-१८ वर्ष की एक कारी बहन सब शैलेश के साथ आये। शैलेश की इच्छा न थी कि विभा

साथ चले। वह अपनी ही इच्छा से आप आई। उषा के विरुद्ध उसकी बहुत सी तरह-तरह की शिकायतें थीं। केवल अपने भाई को ही व्यङ्गय-पूर्ण टेढ़ी-सीधी बातें सुनाकर उसको ज़रा भी सन्तोष नहीं हुआ था, इसी लिए भावज के घर जाकर इतने लोगों के आगे तरह-तरह के तर्क-वितर्क में उलझा कर गँवई-गाँव की अपढ़ भावज को एक दफ़े शर्मिन्दा कर देने की उसे प्रबल लालसा थी। बड़े भाई के साथ आज मुलाक़ात होने के बाद ही से उसने अनेक अप्रिय कठोर अभियोगों के साथ यही बात बार-बार प्रमाणित करनी चाही कि इतने दिन बाद इस स्त्री को फिर घर में लाकर भयङ्कर भूल ही भाई ने नहीं की, प्रत्युत हमारे स्वर्गवासी पितृदेव की स्मृति का भी प्रकारान्तर से अपमान किया गया है। उन्होंने लाचारी से जिसे त्याग दिया था उसी स्त्री को फिर क्यों ग्रहण किया गया? समाज के आगे, बन्धु-बान्धवों के सामने जिसे आत्मीय कहना सम्भव नहीं, कहीं किसी सामाजिक काम-काज अथवा आनन्द-उत्सव में जिसको अपने साथ ले जाया नहीं जा सकता, यहाँ तक कि बड़ी भौजाई कहकर जिसे सम्बोधन करने में भी लज्जा मालूम होगी, उसको लेकर वह (विभा) लोगों के आगे मुँह किस तरह दिखावेगी?

अपरिचित उषा का पक्ष लेकर दो-एक बातें कहने की चेष्टा करते ही क्षेत्रमोहन बाबू स्त्री की दो-एक झिड़कियाँ खाकर चुप हो रहे। विभा ने ख़फ़ा होकर कहा—दादा

मन में समझते हैं कि मैं कुछ नहीं जानती, किन्तु मैं सब ख़बर रखती हूँ। घर में पैर रखते ही इतने पुराने नौकर अब्दुल्ला ख़ानसामा को, मुसलमान होने के कारण, निकाल बाहर किया। गिरधारी को भी नीच जाति का होने के कारण छुड़ा दिया। जिसको जाति-पाँति का इतना ज़्यादा विचार ठहरा उसके साथ सम्बन्ध रखना ही तो हमारे लिए एक मुसीबत है। मैं तो ऐसी भावज को एक दिन के लिए भी अपने भाई की स्त्री न स्वीकार कर सकूँगी, इसके लिए कोई कितना ही नाराज़ क्यों न हो।

सभी ने समझ लिया कि यह कटाक्ष किसे लक्ष्य करके किया गया है। शैलेश ने धीमी आवाज़ से कहा—अब्दुल्ला वग़ैरह के जाने का ठीक कारण यह नहीं है, वे लोग ख़ुद ही घर जाने के लिए चटपटा रहे थे।

उत्तर में विभा अपने दादा के मुँह पर ही तड़ाक से कह उठी—उन भाभीजी के ज़माने में तो उन लोगों में घर जाने की ऐसी उत्कट उत्सुकता कभी नहीं देख पड़ी। इनका पैरा इस घर में आया, और उसी दम उन्हें भागकर जान बचाने को मजबूर होना पड़ा, यही तो मैं भी कहती हूँ।

इन श्लेष-विष-बुझे व्यंग्य वचनों का उत्तर ही क्या था? शैलेश चुप हो रहा।

विभा ने पूछा—नौकर-चाकर तो सब भाग खड़े हुए, अब तुम्हारा काम किस तरह चलता है?

शैलेश ने साधारण भाव से लापरवाही के साथ उत्तर दिया—किसी तरह से चल जाता है। काम तो कोई भी अटका नहीं रहता।

विभा ने फिर भी इस अकिञ्चित्कर असुविधा को असाधारण महत्त्व देते हुए कहा—मैं ख़ूब जानती हूँ कि अपने यहाँ के जो पुराने आदमी चले गये हैं वे अब न आवेंगे। मगर अपने घर को एकदम किसी कुढ़मग्ज़ आचारी पण्डित का घर बना डालने से तो काम न चलेगा; अपने समाज और उसके सभ्यों का ख़याल भी तो रखना पड़ेगा। उनके साथ सामाजिकता रखनी हो तो हमें कुसंस्कार-पूर्ण पाखण्ड-विडम्बना का वहिष्कार, और नव्य दल की परिमार्जित सुरुचि का व्यवहार स्वीकार करके आधुनिक अनुभवों-द्वारा अनुमोदित आचार-विचारों का प्रचार स्वीकार करना पड़ेगा। इससे फिर देख-सुनकर और अच्छे आदमी ढूँढ़कर रक्खो; नहीं तो लोग क्या कहेंगे, सोचो तो?

शैलेश—काम न चलेगा तो और आदमी रखने ही पड़ेंगे।

विभा—किस तरह गुज़र होता है, सो तो तुम्हीं लोग जानो, मेरी तो समझ ही में नहीं आता।

कपड़े पहनने के लिए विभा जाने को उठने लगी। उठते-उठते बोली—बाप का घर ठहरा, गये बिना भी नहीं रहा जाता। मगर जाने पर एक प्याली चाय भी शायद नसीब न होगी।

क्षेत्रमोहन अब तक चुपचाप बैठे थे। भाई और बहन के वितण्डावाद में दख़ल देने या कुछ कहने की उन्हें इच्छा न थी। किन्तु अब उनसे रहा न गया। बोले—पहले भला जाकर देख तो लो; जब न मिले, तभी जो जी में आवे सो कहना।

विभा—मेरा सब देखा पड़ा है। पहले दिन उनका रङ्ग-ढङ्ग और रूखा रुख़ देखकर ही उनको मैं पहचान आई हूँ।

अब वह कोठे पर चली गई। उसका यह उलहना बिलकुल मिथ्या था। असल में उस दिन कुछ भी देख आने भर को न उसे फ़ुरसत थी, न उसके मन की दशा ही ऐसी थी। किन्तु इसका ज्ञान इन दोनों साले-बहनोइयों को नहीं था। क्षेत्र बाबू बोले—क्यों जी शैलेश, सच तो कहती हैं ये, तुम लोगों को यह क्या सनक-सी सवार है? नौकर-चाकर सब छुड़ाकर क्या पूरे बैरागी बाबा बन बैठोगे? आजकल खाने-पीने का क्या प्रबन्ध है? खाते क्या हो?

शैलेश ने हँसकर कहा—खाता हूँ रोटी-दाल-भात, पूरी-तरकारी—

क्षेत्र०—ये चीज़ें गले के नीचे उतरती भी हैं?

शैलेश—कम से कम गले में अटकतीं नहीं, यह भी ठीक है।

क्षेत्र०—(हँसकर) ठीक है, यह मैं भी जानता हूँ। यहाँ मेरे भी गले में सचमुच ये चीज़ें अटकती नहीं हैं।

लेकिन मज़े की बात तो यह है कि हम लोग सोसाइटी के बीच, लोगों के आगे, इस सत्य को स्वीकार करने में बेइज़्ज़ती समझते हैं। अच्छा, तुमने क्या हमेशा इसी ढङ्ग से गुज़र करना तय कर लिया है ?

शैलेश ने कुछ ठहरकर कहा—देखो क्षेत्र बाबू, सच तो यह है कि मैंने ख़ुद तो कुछ भी तय नहीं किया, और यह सब कुछ करने-धरने का भार उसने मुझ पर लादा भी नहीं है। मैंने केवल इतना ही तय कर लिया है कि उसकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ उसकी गिरिस्ती के मामलों में—भीतरी व्यवस्था में—अब मैं हस्तक्षेप न करूँगा।

क्षेत्र बाबू ने एक बार दरवाज़े की ओर नज़र डालकर आहिस्ते से कहा—चुप, चुप, यह बात जो तुम्हारी बहन के कानों तक पहुँच गई तो फिर जान बचाना मुशकिल हो जायगा, यह मैं तुमसे कहे देता हूँ।

शैलेश—इधर जान नहीं भी बची तो हर्ज नहीं; उधर दूसरी तरफ़ इतनी बचाव की आशा पा गया हूँ कि आमदनी से अधिक—दूने के लगभग—ख़र्च होने की दारुण दुश्चिन्ता अब न भोगनी होगी। तुम्हीं बतलाओ, दिन-रात सिर्फ़ रुपये की चिन्ता रहना कैसी विपत्ति की बात है! महीने के पन्द्रह दिन बीतते ही यह सोच सिर पर सवार हो जाता था कि बाक़ी पन्द्रह दिन किस तरह गुज़रेंगे—इतने दिन का ख़र्च कैसे चलेगा! उससे तो छुटकारा मिला। अब बन्दा उस राह

नहीं जाने का। मैं तो जी गया भाई साहब! किसी से रुपये उधार लेने जाना न पड़ेगा अब! जो तनख़्वाह पाता हूँ वही मेरे लिए काफ़ी है—यह गिरिस्ती की अर्थ-समस्या सुलझाने का सहज 'गुर' तुम्हारी सलहज का जाना हुआ था। उसी ने अपव्यय की जड़ उखाड़ फेकने और उसे उजाड़ डालने के लिए अपने समर्थ होने का समाचार मुझे सुनाया है।

क्षेत्र०—यह तुम क्या कह रहे हो जी? सचमुच सलहजजी ऐसी गुनवन्ती हैं? भाई साहब, ख़र्च की तङ्गी से हैरानी क्या एक तुम्हीं को घेरे रहती थी? मैं तो क़र्ज़ के गढ़े के भीतर ग़ोते खा रहा हूँ, गले-गले तक ग़र्क़ हो गया हूँ। उससे उबरने का कोई उपाय नज़र नहीं आता। तुमको इसका पता ही नहीं—अब तो अपना यह मालमता क़ुर्क़ी में लापता हो जाने के बाद घर-बार को धता बताकर जङ्गल में मङ्गल मनाने की मैंने ठान ली है।

शैलेश—इलाहाबाद भाग जाते वक़्त मैं पूरी एक महीने की तनख़्वाह आलमारी में रख गया था। कह गया था कि इतने ही में पूरे एक महीने का ख़र्च चलना चाहिए। पहले तो कभी इतने में इतने दिन का ख़र्च चला ही न था, सोमेन की मा के ज़माने में भी नहीं, उनके मरने के बाद मेरे हाथ से भी नहीं। सोचा था कि इनके हाथ से डर दिखाकर भी अगर इतने में ख़र्च पूरा करा सकूँ तो वही बहुत है। जिन आदमियों के छुड़ा दिये जाने से विभा नाराज़ी

ज़ाहिर कर रही थी उन्हें मुसलमान या नीच समझकर ही अलग कर दिया गया है या नहीं, यह तो मुझे ठीक मालूम नहीं, मगर मैं यह जानता हूँ कि जाते वक्त वे पूरी एक साल की चढ़ी हुई अपनी तनख्वाह पाकर .खुशी-.खुशी अपने घर को गये होंगे। मोदी की दूकान के ४०० रुपये बाक़ी थे, सो सब अदा कर दिये गये। छोटी सी एक कापी में पाई-पाई का हिसाब लिखा रक्खा देख आया हूँ। मैं डरकर पूछ उठा—तुम यह क्या नादानी कर बैठी हो उषा? अभी पन्द्रह-सोलह दिन के लगभग बाक़ी पड़े हैं, खर्च कैसे चलेगा? उत्तर में उसने कहा—मैं कोई नासमझ बालिका नहीं हूँ। इतनी समझ मुझको है। भाई, खाने-पीने का कष्ट तो आज तक उसके हाथों रत्ती भर भी मुझे नहीं मिला। और सच तो यह है कि उसके हाथ का दाल-भात ही मुझे अब अमृत जान पड़ता है। मेरे दर्ज़ी और बज़ाज़ का बक़ाया हिसाब और पुरनोट के रुपये किसी तरह चुक जायँ, तो जान में जान आवे।

क्षेत्रमोहन कुछ कहने ही वाले थे कि अपनी स्त्री को भीतर घुसते देखकर चुप हो रहे।

मोटर तैयार हो आने पर सब उस पर सवार हुए। राह भर क्षेत्र बाबू अन्य-मनस्क भाव से चुपके बैठे रहे। विभा या शैलेश की बातचीत का एक शब्द भी शायद उन्होंने नहीं सुना।

७

कुछ ही मिनटों में मोटर शैलेश्वर के दरवाज़े पहुँच गई। भीतर घुसते ही पहले सोमेन का सामना हुआ। वह पत्थर के कोयले तोड़ने की हथौड़ी लिये चौखट पर बैठा अपनी खेलने की रेलगाड़ी के पहिये की मरम्मत कर रहा था। उसके चेहरे को देखकर एकाएक किसी के मुँह से बात नहीं निकली। उसके मत्थे में, गालों में, ठोढ़ी में, छाती में, हाथों में—देह के ऊपर के हिस्से भर में—प्रायः रङ्ग-बिरङ्गी तिलक-छापे की छापें लगी थीं। गङ्गा-घाट के उड़िया घाटिये ने सफ़ेद, लाल, पीले रङ्ग के चन्दन और मिट्टी से अपने देश के जगन्नाथ से लेकर अवध के राम-सीता तक सभी देवी-देवताओं के नाम छाप दिये थे।

विभा ने ज़रा सी मुसकी छाँटकर इतना ही कहा—ख़ूब झाँकी दिखलाई भैया, जीते रहो!

इन तीनों आदमियों के आगे शैलेश मानो कट गया। स्वभाव ही से उसकी प्रकृति कोमल थी; किसी कारण से शोर-ग़ुल और हुल्लड़-हङ्गामा पैदा कर देने की आदत ही उसकी न थी। किन्तु इस घड़ी बहन की यह अत्यन्त कटु, उत्तेजनापूर्ण उक्ति अकस्मात् उसे असह्य हो गई। लड़के के गाल में ज़ोर से एक थप्पड़ जमाकर उसने कहा—बदमाश पाजी! यह कहाँ से लगवा आया तू? कहाँ गया था?

सोमेन ने रोते-रोते जो कुछ कहा, उससे मालूम हुआ कि आज तड़के वह मा के साथ गङ्गा नहाने गया था। शैलेश ने उसे गरदनिया धक्का देकर ढकेल दिया, और कहा—जा, साबुन से रगड़कर धो डाल इसको!

सब लोग आकर शैलेश के पढ़ने के कमरे में दाखिल हुए। भाई और बहन, दोनों के मुँह पर बेहद गम्भीरता छाई हुई थी। मिनट भर के लगभग कोई कुछ नहीं बोला-चाला। शैलेश के लज्जित उदास मुख से यही ज़ाहिर हो रहा था कि यहाँ तक बढ़ने की बात स्वप्न में भी उसने नहीं सोची थी। किन्तु विभा चुप रहकर भी मानो गर्व के साथ यही कह रही थी कि ये बातें उसकी जानी हुई थीं।

सबसे पहले क्षेत्र बाबू बोले। उन्होंने अचानक ज़रा हँसकर कहा—शैलेश, तुमने तो एकदम चाय की प्याली में तूफ़ान उठा दिया जी! लड़के को तुमने मारा किसलिए—क्या समझकर! तुम लोगों के साथ तो घूमना-फिरना भी मुशकिल है।

पति की बात सुनकर विभा तो अचरज के मारे विमूढ़-सी बन गई। क्षेत्र बाबू के मुख की ओर देखती हुई बोली—चाय की प्याली में तूफ़ान! तुम क्या इस घटना को लड़कों का खिलवाड़ समझ रहे हो?

क्षेत्र०—कम से कम भयानक आतङ्क की कोई बात तो इसमें मुझे नहीं देख पड़ती, और यह मैं अस्वीकार करने में असमर्थ हूँ।

विभा—इसके मानी?

चैत्र०—मानो बिलकुल सहज हैं। आज अवश्य गङ्गा नहाने का कोई पर्व होगा। सोमेन भी अपनी मा के साथ गया और नहा आया होगा। कोई अगर एक दिन कल के जल में न नहाकर गङ्गा में ही स्नान कर आया, तो उसने कौन सा महापाप कर डाला? मुझे तो इसमें कोई दोष नहीं दिखाई पड़ता।

विभा ने स्वामी पर बेहद ख़फ़ा होकर कहा—इसके बाद?

चैत्र बाबू ने कहा—इसके बाद क्या? इसके बाद जो कुछ हुआ वह भी स्वाभाविक ही है। घाट पर दर्जनों उड़िया घाटिये रहते हैं। जान पड़ता है, दो-चार पैसे पाने की आशा से किसी घाटिये ने लड़के के चन्दन का छापा लगा दिया। इसमें भला मार-पीट करने की बात क्या है!

विभा ने वैसे ही क्रोध के स्वर में पूछा—इसका परिणाम क्या हो सकता है, यह भी सोचा है?

चैत्र०—तीसरे पहर तक हाथ-मुँह धोते समय आप से आप सब धुल जाता—यही इसका परिणाम है।

विभा—इतना ही! तुम्हारे बाल-बच्चे होते तो शायद तुम भी उन्हें ऐसी ही बेहूदा हरकतें करने देते?

चैत्र०—जब मेरे बाल-बच्चे हैं ही नहीं तब यह सवाल उठाना ही बेकार है।

विभा ने इससे मन ही मन आघात पाकर कहा—यह सवाल बेकार हो सकता है, और चन्दन भी धोने से छूट

जाता है, यह मैं भी जानती हूँ; लेकिन इस छापे की छाप मन से इतने सहज में नहीं मिट सकती। बाल-बच्चों के भविष्य जीवन की ओर नज़र रखकर ही मा-बापों को हर एक काम करना पड़ता है, और यही उचित है। तुम लोग कुछ भी क्यों न कहो, मैं यह बात सौ दफे़ कहूँगी कि आज का यह काम अत्यन्त अनुचित है।

क्षेत्र०—'तुम लोग' क्यों कहती हो, अकेले मैं ही तो विरोध कर रहा हूँ। शैलेश ने तो लड़के के थप्पड़ मारकर गरदनिया देकर प्रायश्चित्त कर ही डाला—लेकिन मैं यह आशा नहीं करता और न ऐसी आशा की ही जानी चाहिए कि एक आचार-निष्ठ पण्डित-घराने की लड़की यहाँ आकर एक ही दो दिन में पूरी मेम साहब बन बैठेगी। ख़ैर, चाहे जो हो, तुम दोनों भाई-बहन बैठे-बैठे इस कुसंस्कार के फलाफल का विचार करते रहो. मैं जाता हूँ।

शैलेश चुपका बैठा था। क्षेत्रमोहन के मुख की ओर देखकर उसने कहा—कहाँ जाते हो जी ?

क्षेत्र०—ऊपर जाता हूँ। मालकिन सलहज साहबा से जान-पहचान कर आने का काम भी तो करना ही है; तब तक वही कर आऊँ। देखूँ मुझसे बोलती हैं या नहीं; जाकर .खुशामद-मिन्नत करके देखूँ ज़रा।

क्षेत्रमोहन चल दिये। ऊपर चढ़कर, कमरे के दरवाज़े के पास पहुँचकर, उन्होंने बाहर ही से आवाज़ देकर कहा—सरकार, मेरा नमस्कार स्वीकार करिए।

उषा ने घूमकर चेत्र बाबू को देखते ही आँचल खींचकर सिर ढक लिया, और उठकर खड़ी हो गई।

पास बैठा हुआ सोमेन शायद माता के काम को व्यर्थ बढ़ा रहा था। वह बोल उठा—फूफाजी!

उषा ने पास पड़ी हुई कुर्सी की ओर हाथ का इशारा करके धीमी आवाज़ से कहा—"बैठिए।" उषा के सामने की दोनों आलमारियों के किवाड़े खुले हुए थे; फ़र्श के ऊपर तरह-तरह के कुर्ते, धोतियाँ, साड़ी, जाकेट, कोट, पतलून, वेस्टकोट, मोज़े, टाई-कालर, रूमाल वग़ैरह कपड़े ढेर थे। कितने कपड़े होंगे, यह अन्दाज़ करना आसान न था। चेत्र बाबू ने बैठकर कहा—यह क्या हो रहा है?

उस ढेर के भीतर से एक जोड़ी मोज़े निकालते हुए सोमेन ने कहा—यह लो, एक जोड़ा और निकल आया। देखो अम्मा, यही ज़रा सा छेद है।

उषा ने उसे लड़के के हाथ से लेकर तहाकर एक तरफ़ रख दिया। क़ायदे से सँभालकर कपड़े रखने का उषा का ढङ्ग देखकर चेत्रमोहन ने कुछ आश्चर्य के साथ कहा—यह क्या किसी अनाथाश्रम में देने के लिए कपड़े छाँटे जा रहे हैं? या घर के कूड़े की सफ़ाई हो रही है?

चेत्र बाबू यह सोचकर आये थे कि देहात की लड़की नई बहू उन्हें देखकर शायद एकदम लज्जा के मारे सिटपिटा जायगी, दो हाथ का घूँघट निकालकर कोने में दबकने

लगेगी। मगर उषा के आचरण में वैसी कोई बात नहीं देख पड़ी। उसने सिर उठाकर देखा तो बेशक नहीं, लेकिन बात का जवाब सहज स्वाभाविक स्वर में ही दिया। उषा ने कहा—सोचती हूँ, इन सबको मरम्मत करने के लिए दर्ज़ी के यहाँ भेज दूँ। सिर्फ़ मोज़े ही इतने पड़े हैं कि शायद दस साल तक नये ख़रीदने की ज़रूरत न हो।

दम भर आश्चर्य से चुप रहकर क्षेत्रमोहन ने कहा—इस समय यहाँ कोई नहीं है, इसलिए चटपट एक बात कह दूँ। अपनी ननद को देखकर उसके स्वामी के बारे में अपने मन में कोई अनुमान न कर बैठिएगा कहीं! सोमेन ने मार खाई है, उसे अपने ऊपर पड़ी हुई मार समझ लोगी तो बेचारे शैलेश के साथ बेइंसाफ़ी होगी। इतना बड़ा निकम्मा वह असल में कभी नहीं है।

उषा ने इस बात का कुछ जवाब नहीं दिया। चुपचाप खड़ी रही। क्षेत्रमोहन ने कहा—अब आप बैठिए। मेरे लिए अपना समय व्यर्थ न गँवाइए। (ज़रा चुप रहकर) आपके समान गृहलक्ष्मी के हाथ का किया सुघर काम देखकर मैं भी घर-गिरिस्ती का कुछ काम-काज सीख लेना चाहता हूँ।

उषा ने फ़र्श पर बैठकर मुसकिराकर कहा—यह सब औरतों का धन्धा सीखकर आपको क्या लाभ होगा?

क्षेत्र०—इसका जवाब आपको और किसी दिन दूँगा, आज नहीं।

उषा चुपचाप अपने हाथ का काम करने लगी। किन्तु दम भर बाद ही बोली—ये काम तो ग़रीब दुखिया लोगों के लिए हैं; आप लोगों को तो इस शिक्षा का कभी प्रयोजन ही न होगा।

क्षेत्रमोहन ने लम्बी साँस लेकर कहा—भाभी साहबा, बाहर की तड़क-भड़क देखकर अगर आपको भी धोखा हो जायगा तो फिर संसार में हमारे जैसे अभागों की व्यथा का अनुभव करनेवाला और कोई न रह जायगा। जी चाहता है कि अपनी छोटी बहन को आपके पास कुछ दिनों के लिए छोड़ जाऊँ, जिसमें आपकी मङ्गलमयी निपुणता थोड़ी सी भी वह अपने साथ सुसराल में ले जा सके।

उषा चुप रही। क्षेत्र बाबू कुछ कहने ही वाले थे कि एकाएक कई पैरों के जूतों की मचमचाहट सीढ़ियों के नीचे सुनकर इतना ही कहा—सब लोग ऊपर ही आ रहे हैं। किन्तु शैलेश की बहन और मेरी बहन में बाहरी वेशभूषा का सादृश्य देखकर दोनों के हृदय भी समान न समझ लीजिएगा।

उषा ने मुसकिराकर सिर हिलाकर कहा—शायद मैं ठीक-ठीक पहचान लूँगी।

क्षेत्र०—शायद! मुझे तो भरोसा है कि आप ज़रूर पहचान लेंगी।

८

सीढ़ियों पर जिनके पैरों की आहट सुनाई दी थी वे थे शैलेश, विभा और विभा की ननद उमा। शैलेश और विभा ने कमरे में प्रवेश किया। सबके पीछे उमा थी। उसने चौखट के इधर रखने को जैसे पैर बढ़ाया वैसे ही उसके दादा क्षेत्र बाबू ने आँख के इशारे से मना करके कहा—जूते बाहर ही उतार आओ।

विभा ने घूमकर देखने के बाद अचरज के साथ पूछा—यह क्यों?

क्षेत्र०—इसमें दोष क्या है? यहाँ पैर में न तो काँटा गड़ेगा, और न ठोकर लगेगी।

विभा—यह मैं जानती हूँ। किन्तु एकाएक जूते उतारने की ज़रूरत क्यों हुई, यही पूछती हूँ।

क्षेत्र०—एक तो भाभी साहबा पुराने आचार-विचार के हिन्दू-घर की लड़की हैं, और उनके वैसे ही विचार हैं; दूसरे अपने बड़ों के पास जूते न पहनकर जाना ही अच्छा जान पड़ता है।

विभा ने स्वामी के पैरों की ओर नज़र डाली तो देखा कि केवल बहन को ही वैसा करने का उपदेश नहीं दिया, बल्कि ख़ुद भी पहले ही उसी के अनुसार काम कर चुके हैं।

विभा के बदन में आग लग गई। उसने कहा—बड़ों पर भक्ति-श्रद्धा तुममें असाधारण देख पड़ती है। सो अच्छा

ही है; लेकिन उसका बेहद बढ़ना अच्छा नहीं। हाँ, यह गुरुजन के सोने का कमरा न होता, अगर ठाकुरद्वारा होता, तो शायद आज तुम यहाँ एकदम गोबर खाकर पञ्चगव्य पीकर पवित्र होकर ही पैर रखते!

स्त्री का क्रोध देखकर क्षेत्रमोहन हँसने लगे। बोले—गोबर के ऊपर रुचि नहीं है, उसे मैं भाभी साहबा की ख़ातिर भी मुँह में न डाल सकूँगा; किन्तु ठाकुरजी के साथ मेरा कोई सम्बन्ध ही नहीं, तब अकारण उनके स्थान में घुसकर मैं उत्पात भी न करता। अच्छा भाभी साहबा, इस कमरे में तो मैं पहले भी बहुत दफ़े आया हूँ। याद पड़ता है, जैसे यहाँ एक कार्पेट बिछा हुआ था। उसे क्यों उठा डाला?

उषा ने कहा—कार्पेट धोया-पोंछा न जाने के कारण जगह मैली-गन्दी हो जाती है। सोने का कमरा ठहरा—

विभा बीच ही में व्यङ्ग के ढङ्ग से पूछ बैठी—कार्पेट बिछा रहने से जगह मैली-गन्दी हो जाती है?

उषा ने उसकी ओर देखकर धीरे-धीरे शान्तभाव से उत्तर दिया—हो तो जाती ही है बहन। यह सच है कि वह गन्दगी देख नहीं पड़ती, लेकिन कार्पेट के नीचे ढेरों धूल-मिट्टी दबी रहती है।

जान पड़ता है, विभा इसका प्रतिवाद करने जा रही थी, किन्तु स्वामी के प्रबल कण्ठ-स्वर से अकस्मात् रुक गई। क्षेत्र

बाबू अत्यन्त उत्साह के साथ बोल उठे—बस-बस, भाभी साहबा, गन्दगी के दब-छिप जाने से ही हम लोगों का काम चल जाता है; इससे अधिक हम और कुछ नहीं चाहते। गन्दगी के आँखों की आड़ में रहने से ही हम लोग ख़ुश हो जाते हैं। क्या कहते हो शैलेश, ठीक है न?

शैलेश ने, अच्छा या बुरा, कुछ न कहा।

विभा के क्रोध का ठिकाना न रहा। किन्तु क्रोध को दबाकर, कुछ तर्क न करके वह चुप हो रही। उन दोनों स्वामी और स्त्री के बीच सच्ची—दिली—प्रीति और स्नेह की शायद कमी न थी; किन्तु बाहर देखने में, दुनिया के व्यवहार में, इसी प्रकार के वाद-प्रतिवाद की टक्कर प्रायः प्रकट हो पड़ती थी। लोगों के सामने विभा बहस में किसी तरह हार नहीं मान सकती थी—यह उसकी आदत में दाख़िल था। इसी कारण कहीं बातों-बातों में बात बहुत बढ़ न जाय, इस डर से क्षेत्रमोहन बाबू बहुधा ज़बानी जङ्ग के बीच ही में पीठ दिखा देते थे। किन्तु आज विभा ने क्षण भर के लिए पति में उस भाव को न देख करके अपने को रोकना, सँभालना ही ठीक समझा।

वास्तव में आज क्षेत्रमोहन के मन में विभा के विरोध को प्रश्रय देने का—उसे सिर चढ़ाने का—भाव नहीं था। दूसरे को दोष लगाकर कठोर बातें कहना एक प्रकार से विभा का स्वभाव ही हो गया था। अधिकांश स्थलों में ही शायद

इससे अशिष्टता प्रकट होने के सिवा और कोई क्षति न हुआ करती थी; किन्तु इस जगह यह देखकर कि वह पहले ही दिन से एकदम कमर कसकर इस निरपराध बहू के पीछे पड़ गई है, बिना किसी दोष के विशेष दुःख भोगने के बाद जिस स्त्री ने स्वामी के घर में दैवयोग से स्थान प्राप्त कर पाया है, उसे उसके उस स्थान से भ्रष्ट करने की दुरभिसन्धि विभा के मन में है, क्षेत्र बाबू का मन—जो स्वयं एक स्त्री के स्वामी थे—दुःख और खीझ से पूर्ण होता जा रहा था। साथ ही, दम भर में, इस सत्य का अनुभव करके कि उषा के पैरों की धूल की बराबरी करने की भी योग्यता विभा में नहीं है, क्षेत्र बाबू के तीखे हो रहे व्यथित चित्त में विभा के लिए रत्ती भर क्षमा का भाव न रह गया। किन्तु इस बात को प्रकट रूप से कहना भी इस उच्च शिक्षित सम्प्रदाय में वैसा ही कठिन था। चाहे जिस तरह हो, बाहर से सभ्यता का आवरण डालकर उसमें इसे छिपाना ही होगा।

क्षेत्र बाबू ने बहन को लक्ष्य करके कहा—उमा, अपनी इन देहात की भाभी के पास आकर अगर रोज़ दोपहर को बैठ सको, तो चाहे जिस परिवार में जाकर क्यों न पड़ो बहन, कभी दुःख न पाओगी, यह मैं कहे देता हूँ।

उमा हँसकर चुप रही। उषा ने सिर नीचा किये ही कहा—तब तो सब बन गया, और क्या! आपके समाज में लोग उस बेचारी का बहिष्कार ही कर देंगे।

चेत्र बाबू ने कहा—कर न दें बहिष्कार भाभी साहब। लेकिन मैं यह बाज़ी लगाकर कह सकता हूँ कि ये दोनों, पति-पत्नी, बड़े सुख से रहेंगे।

शैलेश ने एक बार विभा की ओर कनखियों से देखकर दिल्लगी के तौर पर कहा—बाज़ी लगाने की ज़रूरत नहीं है भाई, इतना कहना ही काफ़ी है।

चेत्रमोहन ने उत्तर देते हुए कहा—और चाहे जो हो, आज ही का यह भाभीजी का काम अगर उमा याद रख ले तो कम से कम व्यर्थ नित्य नये मोज़े ख़रीदने की मुसीबत से ही उसका स्वामी छुटकारा पा जायगा।

विभा तब से चुप ही थी; मगर अब चुप न रह सकी। किन्तु दबे हुए क्रोध का कोई चिह्न प्रकट न होने देकर ज़रा हँसने का प्रयास करती हुई बोली—उमा को अपने भावी परिवार में शायद पुराने मोज़े गाँठने की आवश्यकता ही न हो। शायद मोज़े गाँठने पर भी उसका स्वामी उन्हें न पहनना चाहे। पहले से कुछ नहीं कहा जा सकता।

चेत्रमोहन ने कहा—कहा क्यों नहीं जा सकता? आँख-कान खुले रहने ही से कहा जा सकता है। जो असली जहाज़ चलानेवाला कप्तान है वह पानी को देखते ही जान लेता है कि कितना गहरा है। भाभीजी, आपने जहाज़ पर पैर रखते ही समझ लिया था कि ज़रा सी असावधानी पाते ही तलहटी की कीचड़ उठकर पानी को गँदला कर देगी। इस

के लिए मैं आपको बहुत-बहुत धन्यवाद देता हूँ। और, शैलेश की ओर से तो लाखों-करोड़ों धन्यवाद भी कम होंगे।

उषा अत्यन्त लज्जित हो उठी। उसने विनीत भाव से कहा—अपने घर में अपने स्वामी की दशा समझने की चेष्टा करने में तो धन्यवाद की कोई बात नहीं है क्षेत्रमोहन बाबू।

इसका उत्तर दिया विभा ने, कहा—कम से कम अपनी स्त्री का अपमान करने का काम तो पूरा होता है। इसके सिवा किसी को उञ्छ वृत्ति* करते देखने से ही शायद किसी की भक्ति और श्रद्धा उमड़ पड़ती है।

उषा ने सिर उठाकर दृष्टिपात करके पूछा—पति की अवस्था को समझकर उसी के अनुसार व्यवस्था करने की चेष्टा को क्या उञ्छ-वृत्ति कहते हैं ननदजी?

क्षेत्रमोहन तुरन्त कह उठे—नहीं कहते। दुनिया का कोई भला आदमी ऐसी बात ज़बान पर नहीं ला सकता। किन्तु पति की नज़रों में स्त्री को निरन्तर हीन प्रमाणित करने की चेष्टा को हृदय की कौन सी प्रवृत्ति कहते हैं, यह अपनी ननदजी से पूछ लीजिए।

विभा के मुँह से सहसा कोई बात न निकली। अभि-भूत की तरह वह कभी कहनेवाले (क्षेत्र बाबू) की ओर और कभी शैलेश की ओर चुपचाप ताकने लगी। पहले वह मानो

* खेत कट जाने पर उसमें बिखरे हुए अन्न को बीनकर उससे जीविका-निर्वाह करना उञ्छ-वृत्ति है।

विश्वास ही न कर सकी कि इतने लोगों के सामने उसका पति सचमुच इस तरह का आघात कर सकता है। इसके बाद शैलेश के मुख पर स्थिर दृष्टि स्थापित करके वह एकाएक रो दी, और बोली—अब तो फिर मैं तुम्हारे घर आ नहीं सकती दादा। अब मैं हमेशा के लिए जाती हूँ।

शैलेश व्याकुल हो उठा। उषा अपने हाथ का काम फेंककर जल्दी से उठ खड़ी हुई, और विभा का हाथ पकड़कर बोली—हम लोगों ने तो तुमको कोई बात कही नहीं बहन।

एकाएक यह अप्रिय घटना हो गई। इस गड़बड़ के बीच क्षेत्रमोहन चुपके से उठकर कमरे के बाहर चले गये। विभा अपना हाथ छुड़ाकर आँखें पोंछते-पोंछते कहने लगी—मैं जब आपकी केवल शत्रुता ही करती हूँ, तब इस घर में अब मेरा पैर रखना किसी तरह उचित नहीं।

उषा ने कहा—लेकिन ऐसा ख़याल तो कभी मेरे मन में पैदा ही नहीं हुआ ननदजी।

विभा ने मानो सुना ही नहीं। वह आँसुओं से विकृत स्वर में कहने लगी—आज वे मेरे मुँह पर ही स्पष्ट कह गये, कल शायद दादा भी यही बात कहेंगे। उनकी नई घर-गिरिस्ती के प्रबन्ध में कुछ कहना अपना अपमान ही कराना है। उमा, आओ, घर चलो।

नीचे उतरने को उद्यत होकर विभा ने फिर कहा—भाभी (शैलेश की मृत दूसरी स्त्री) जब नहीं रह गईं तब इस घर

में आना मेरी ही भूल थी। आज बाप के घर से मेरा सब नाता टूट गया।

सीढ़ियों से उतरती हुई विभा नीचे पहुँच गई। शैलेश भी पीछे-पीछे उतर आया, और सङ्कोच के साथ बोला—तो मेरे लाइब्रेरी के कमरे में ही आकर ज़रा देर बैठो विभा।

विभा ने गरदन हिलाकर कहा—अब कहीं न बैठूँगी। लेकिन दादा, मेरी उन स्वर्गवासिनी भाभी को बिलकुल ही न भुला देना। उनकी बड़ी इच्छा थी कि सोमेन विलायत जाकर लिखे-पढ़े, और आदमी बने। दोहाई है तुम्हारी, सोमेन को बिगड़ने न देना। आज उसे मैंने जिस ढङ्ग से अपनी आँखों से देखा है, इसी तरह की शिक्षा अगर उसे मिलती रही तो समाज के लोगों को मैं मुँह न दिखा सकूँगी।

विभा के आँसुओं से गद्गद कण्ठ-स्वर से विचलित होकर शैलेश ने विनय-पूर्वक कहा—तुम मेरे बाहर के बैठके में चलकर बैठो बहन। इस तरह रूठकर चली जाओगी तो मुझे बेहद कष्ट होगा।

विभा की आँखों से फिर आँसू गिर पड़े। मालूम नहीं, सोमेन के भविष्य की चिन्ता ही इन आँसुओं के गिरने का कारण थी या कुछ और। आँचल से आँसू पोंछकर विभा ने कहा—अब मैं कहीं जाकर बैठना नहीं चाहती दादा। किन्तु सोमेन हमारे बाप के कुल में एकमात्र वंशधर है, अतएव उसके ऊपर ज़रा नज़र रक्खो। एकदम अपने को भूल न जाना!

विभा सीधे दरवाज़े के बाहर आकर अपनी गाड़ी में सवार हो गई। उमा बराबर चुप थी। वह एक भी बात में शामिल नहीं हुई। चुपचाप आकर गाड़ी में विभा के पास बैठ गई।

शैलेश साथ ही साथ आया था। वह एकाएक कह उठा—विभा, सोमेन को तुम्हीं न अपने साथ ले जाओ। तुम्हारे अपने कोई लड़का-बाला नहीं है। तुम उसे अपनी इच्छा के अनुसार बनाकर पालो-पोसो, आदमी बनाओ।

विभा और उमा, दोनों विस्मय के साथ शैलेश के मुँह की ओर ताकने लगीं। विभा ने कहा—यह निरर्थक प्रस्ताव क्यों करते हो दादा? यह तुमसे न हो सकेगा, और न ऐसा तुम करने ही पाओगे।

शैलेश ने धुन में आकर अपनी बात पर ज़ोर देकर कहा—मैं अवश्य ही ऐसा कर सकूँगा—ऐसा ही करूँगा। मैं तुमको वचन देता हूँ विभा।

विभा ने सन्देह के स्वर में सिर हिलाते हुए कहा—ऐसा कर सको तो अच्छी बात है। सोमेन को मेरे पास भेज देना। उसे उच्च शिक्षा दिलाने के लिए अगर तुम्हारे किये रुपये न हों तो मैं भी तुमको वचन देती हूँ दादा, उसका भार आज से मैं लेती हूँ।

अब विभा ने उमा की दृष्टि का अनुसरण करके देखा, ऊपर के बरामदे में खड़ी हुई उषा नीचे उन्हीं लोगों की ओर

चुपचाप ताक रही है। दम भर में मोटर चल खड़ी हुई। मोटर जाने के बाद भीतर आकर शैलेश अपने पढ़ने-लिखने के कमरे में बैठ रहा। ऊपर जाने की उसको इच्छा न हुई, साहस भी न था। उसे यह जानने को बाक़ी न था कि उषा ने सब बातचीत सुन ली है।

८

रात को थाली परोसकर स्वामी को बुलाने के लिए आदमी भेजकर उषा, और दिनों की तरह, पास ही बैठी हुई थी। केवल सोमेन आज उसके पास न था। शायद वह सो रहा था, अथवा ऐसा ही कुछ होगा। शैलेश आया। उसका मुँह बहुत ही गम्भीर था। होने की बात ही थी। व्यर्थ प्रश्न करना उषा का स्वभाव न था। आज की घटना के सम्बन्ध में उसने कोई बात नहीं पूछी, और जो कुछ जाना हुआ नहीं है उसके जानने के लिए कुछ कौतूहल भी नहीं प्रकट किया। स्त्री के इस स्वभाव का परिचय कम से कम शैलेश इन्हीं कई दिनों के भीतर पा चुका था। भोजन के लिए आसन पर बैठकर उसे मन ही मन क्रोध हो आया, परन्तु आश्चर्य नहीं हुआ। दम-दम भर पर तिरछी नज़रों से देखकर वह स्त्री के मुख की आकृति अथवा भाव को समझने की चेष्टा कर रहा था। किन्तु उसे निश्चित रूप से जान पड़ा कि उषा जान-बूझकर रोशनी बचाकर बैठी है,

जिसमें उसका चेहरा न देख पड़े। आज और दिनों की तरह शैलेश से खाया नहीं गया। जिस लिए आज उसे आहार में रुचि न थी उसका कारण दूसरा ही था; तथापि प्रश्न न करने पर भी, गले पड़कर, उसने स्त्री को यह सुना दिया कि जिसका अभ्यास नहीं वैसा खाना-पहनना केवल दो ही चार दिन चल सकता है। उसे नित्य का खाना-पहनना बना देने से फिर उसमें कुछ स्वाद नहीं रह जाता।

यह बात बहस की नज़र से चाहे जो हो, किन्तु इस स्थान में यह कथन सत्य नहीं है, यह जानकर उषा चुप ही रही। मिथ्या सचमुच मिथ्या है, यह प्रमाणित करने के लिए उषा कभी बहस नहीं करना चाहती थी। किन्तु इस तरह चुपचाप अस्वीकार करने से प्रतिपक्षी का क्रोध और भी बढ़ जाया करता है। इसी से सोने के लिए कमरे में आकर शैलेश ख़ामख़ाह कह उठा—मैं यह मानता हूँ कि हम लोगों ने एक दिन तुम्हारे साथ अत्यन्त अन्याय किया था; किन्तु इसी लिए आज इस घर में तुम्हारी व्यवस्था के सिवा अगर और किसी की कोई व्यवस्था न चले तो यह भी बड़ा ज़ुल्म होगा।

ऐसी कड़वी बात शैलेश ने पहले दिन भी ज़बान से नहीं निकाली। शायद उषा मन ही मन अत्यन्त विस्मित हुई; किन्तु मुँह से उसने इतना ही कहा—मैं अपनी यह ग़लती समझ नहीं पाई थी।

इस तरह अत्यन्त विनय के साथ क़बूल कर लेने से क्रोध की मात्रा और अधिक बढ़ जाती है। शैलेश ने कहा—तुम्हें समझना चाहिए था। हमारी पुरानी शिक्षा, दीक्षा, संस्कार, समाज के नियम वग़ैरह सब कुछ उलट-पुलटकर अगर तुम इस घर को अपने बाप का घर बना डालना चाहो, तो हम लोगों के समान आदमियों को बड़ी मुशकिल होगी। जान पड़ता है, सोमेन को कल उसकी बुआ के घर भेज देना होगा। तुम क्या कहती हो इस बारे में ?

उषा ने कहा—लड़के के भले के लिए अगर इसका प्रयोजन जान पड़े तो भेजना ही होगा।

उषा के इस कथन के भीतर गरमी या श्लेष कुछ भी पकड़ न पाकर शैलेश दुबधा में पड़ गया। वह किसके लिए, किस कारण, यह सब कर रहा है, यह भी मन के भीतर ख़ूब दृढ़ और ख़ूब स्पष्ट नहीं नज़र आता। किन्तु इन दुर्बल प्रकृति-वाले मनुष्यों का स्वभाव ही यह होता है कि वे काल्पनिक मानसिक वेदना और असङ्गत अभिमानमय रोष के द्वार से, एक के बाद एक करके, सीढ़ी से सीढ़ी पर पैर रखते हुए तेज़ी के साथ नीचे उतरते चले जाते हैं। दम भर चुप रह-कर शैलेश ने कहा—हाँ, प्रयोजन है, यही सबका विश्वास है। जिस आचार-व्यवहार और रीति-नीति आदि को हम लोग नहीं मानते, मान नहीं सकते, उसी के लिए भाई-बहन के बीच झगड़ा हो, अथवा अपने समाज या सोसा-

इटी के आगे उपहास का पात्र बनना पड़े, यह मुझे अच्छा नहीं लगता।

उषा ने कुछ प्रतिवाद नहीं किया—अपनी ओर से कैफ़ियत देने की चेष्टा तक नहीं की; किन्तु उसके मुँह से अचानक एक लम्बी साँस निकल ही पड़ी। सन्नाटे में वह साँस शैलेश ने भी सुन ली। उषा ने ख़ुद लड़ाई-झगड़ा नहीं किया, उसका पक्ष लेकर विभा के सम्बन्ध में जितनी कठोर बातें कही गई थीं, उनमें से एक भी उषा के मुँह से नहीं निकली थी। यह बात इतनी सत्य थी कि इस बारे में इशारा तक नहीं किया जा सकता था, और न इसकी चर्चा उठाई जा सकती थी। क्षेत्रमोहन के अपराध का दण्ड दूसरे आदमी के सिर अगर नहीं मढ़ा जा सकता तो इसमें प्रतिहिंसा या जलने की कुछ भी बात नहीं है—यही साबित करने के लिए शैलेश ने फिर कहा—जिसे विलायत जाकर लिखना-पढ़ना होगा, जिस समाज के भीतर उसे रहना और उठना-बैठना पड़ेगा, उसे लड़कपन से ही उसी प्रकार की आब-हवा में रहकर पाले-पोसे जाने की ज़रूरत है। उसका बचपन किसी अस्वाभाविक अवस्था में बीतने देने से उसके साथ भारी अन्याय और अविचार करने के समान होगा।

शैलेश ने क्षणभर उत्तर की अपेक्षा करके कहा—इस बारे में तुम्हें कुछ कहना न हो तो और बात है। लेकिन मुँह से सिर्फ़ लम्बी साँस छोड़ने से ही उसका उत्तर न होगा।

सोमेन के बारे में हम लोगों ने अच्छी तरह सोच-विचार करके ही यह व्यवस्था की है।

सोमेन पास ही सोया हुआ था। इस घर में दूसरी औरत न रहने के कारण उषा जिस दिन आई उसी दिन से सोमेन को अपने साथ ही सुलाया करती थी। उस सो रहे बालक के माथे पर स्नेह-सहित सँभालकर बायाँ हाथ रखकर उषा ने धीरे-धीरे कहा—कुछ भी क्यों न ठीक करो, वह तुम लड़के के भले के ही लिए करोगे। इस बारे में इसके सिवा और कुछ क्या कोई सोच सकता है? अच्छा तो है, यही व्यवस्था करो।

बिजली की सब रोशनी बुझा देने पर एक कोने में तेल का चिराग़ धीमी रोशनी कर रहा था। उसी स्वल्प प्रकाश में शैलेश ने अपने बिस्तर पर बैठकर थोड़ी ही दूर पर पलँग पर पड़ी हुई उषा के मुख की ओर देख करके उसका भाव ताड़ने की चेष्टा करते हुए कहा—इसके अलावा एक बात और है। सोमेन के विलायत जाकर पढ़ने-लिखने का कुल ख़र्च आप देने का वादा विभा ने कर लिया है। यह भी तो कम सुविधा नहीं है!

उषा की आवाज़ में कभी किसी कारण उत्तेजना का भाव नहीं प्रकट हो पाता था। शान्त भाव से बात कहने का उसका स्वभाव है। वह बोली—नहीं, यह हो नहीं सकता। पढ़ा-लिखाकर आदमी बनाने का ख़र्च देने के लिए उनको लड़का मैं हरगिज़ नहीं दे सकूँगी।

शैलेश ने कहा—इस काम के लिए बहुत रुपये चाहिएँ। बड़ी रक़म ख़र्च होगी।

उषा वैसे ही शान्त कण्ठ से बोली—दरकार होगी तो वह रक़म देनी ही पड़ेगी।—ख़ैर, देखा जायगा। अब तुम सो जाओ। ज़्यादह रात न करो।

दूसरे दिन तीसरे पहर शैलेश कालेज से क्लब होकर घर आया, तो रसोई की एक तरह की सुपरिचित और अत्यन्त प्रिय गन्ध नाक में जाते ही विस्मित पुलकित हो उठा। वह अपने पढ़ने-लिखने के कमरे में गया। थोड़ी देर बाद चाय और जलपान का सामान लेकर जिस आदमी ने दर्शन दिये, उसका चेहरा देखकर शैलेश ने पहचान लिया, यह मुसलमान है।

रात को खाने के दालान में फिर रोशनी हुई। सजे-सजाये टेबिल पर नज़र पड़ते ही शैलेश मन ही मन यह अस्वीकार न कर सका कि सचमुच इसी के लिए उसका मन बहुत ही छिपे-छिपे व्यग्र और व्याकुल हो उठा था—वह यही व्यवस्था चाहता था।

'डिनर' का आहार अभी एक रकाबी के आगे नहीं बढ़ पाया था कि उषा आई और ज़रा दूर पर एक कुर्सी खींचकर उस पर बैठ गई।

शैलेश का जी उस वक़्त ख़ुश था। उसने दिल्लगी कर के कहा—इस जगह आने से तुम जाति-भ्रष्ट न हो जाओगी?

शास्त्र में लिखा है कि सूँघना भी आधे भोजन के बराबर होता है।

उषा किञ्चित् हँसी की रेखा झलकाकर कहने लगी—यह कहना तुम्हारे लिए उचित नहीं। जिस शास्त्र को तुम मानते नहीं, उसका प्रमाण और दोहाई देना तुम्हें नहीं सोहता।

शैलेश भी हँस पड़ा। कहने लगा—अच्छा, हार मानी। लेकिन शास्त्र की दोहाई मैं भी न दूँगा, और तुम भी यहाँ से भाग न जाना। फिर भी यह तो निश्चय है कि कल भाग्य से तुम्हें ज़रा खोंचा दिया था, उसी से तो ऐसे पदार्थ नसीब हुए! ठीक है न उषा? मगर इस भोजन की तैयारी में तुमको क्या बहुत अधिक ख़र्च करना पड़ेगा?

उषा ने गरदन हिलाकर कहा—नहीं। अपव्यय न हो तो किसी खाने-पीने की चीज़ में बहुत अधिक ख़र्च नहीं पड़ सकता। अगले महीने से मैं ख़ुद ही यह सब करने की सोच चुकी थी। हाँ, लेकिन इस ओर ज़रूर नज़र रक्खो कि सामान वृथा-ख़राब न होने पावे। मैंने ख़र्च के खाते में जिस तरह जो तख़मीना लिखकर लगा रक्खा है, वह ठीक वैसा ही और उतने में ही पूरा हो जाना चाहिए। होगा तो?

शैलेश ने आश्चर्य के साथ कहा—क्यों न होगा जी! भला इसका कारण तो सुनूँ?

उषा तत्काल इस प्रश्न का उत्तर न दे सकी। दमभर चुपचाप नीचे की ओर ताकती रही। फिर एकाएक सिर

उठाकर स्वामी के चेहरे पर स्थिर दृष्टि जमाकर बोली—कल रात भर सोचते रहकर अन्त को मैंने जो निश्चय किया है, उसे फिर डिगाने या अन्यथा करने के लिए कोई आज्ञा न दो, यही तुमसे मेरी प्रार्थना है।

शैलेश का चित्त नरम हो पड़ा। उसने कहा—ऐसा करने की तो अब तक मैंने किसी दिन कुछ भी कोशिश नहीं की। मैं बखूबी जानता हूँ कि तुम्हारा सिद्धान्त तुम्हारे ही योग्य है। उसमें उलट-फेर बहुधा कुछ भी नहीं होता, होना ठीक भी नहीं। मैं दुर्बल प्रकृति का आदमी हूँ, किन्तु तुम्हारा मन उतना ही दृढ़ है।

स्वामी के मुख पर से दृष्टि हटाकर उषा ने धीमे स्वर में कहा—मैंने बहुत सोचकर देखा, सचमुच और कुछ व्यवस्था नहीं हो सकती।

शैलेश ने समझा कि यह सोमेन के सम्बन्ध में कहा गया है। उसने हँसते हुए कहा—भूमिका तो हो चुकी, अब बताओ तो सही कि तुमने इस बारे में क्या निर्णय किया है? मैं क़सम खाकर कहता हूँ कि तुमसे अपने निश्चय के विपरीत करने का अनुरोध कदापि न करूँगा।

उषा मिनट भर के लगभग चुपचाप बैठी रही। उसके बाद बोली—दादा के परिवार में मेरा तो गुज़र होता चला जा रहा था, विशेष कोई कष्ट न था। कल फिर मैं उन्हीं के पास चली जाऊँगी।

शैलेश—उनके पास जाओगी? कब तक लौटोगी?

उषा—मुझे क्षमा करो, लौटना अब मेरे लिए सम्भव न होगा। मैंने बहुत सोच-विचारकर देखा, यहाँ मेरा रहना हो नहीं सकता। यही मेरा निश्चय है।

उषा की ये बातें सुनते ही शैलेश मानो पत्थर का पुतला बन गया। हृदय के भीतर उसका चित्त मानो लगातार मुगदर मार-मारकर यही कहने लगा—जो लोहे के किंवाड़े बन्द हो गये, उन्हें तोड़ डालने की ताक़त दुनिया भर में किसी में भी नहीं।

१०

सबेरे नींद से आँख खुलते ही शैलेश को जान पड़ा कि उसने सारी रात भयङ्कर बुरे स्वप्न देखते हुए बिताई है। खिड़की से झाँककर देखा, नित्य-नियम के अनुसार उषा रोज़ के कामों में लगी हुई है। सोमेन उसके साथ ही है, शायद खाने का तक़ाज़ा कर रहा है। सीढ़ियों से उतरते वक़्त राह में चार आँखें होते ही उषा ने सिर उठाकर कहा—तुम्हारी चाय बना ली है नौकर ने। मुँह-हाथ धोने में देर करोगे तो बिलकुल ठण्डी हो जायगी। ज़रा जल्दी करो।

शैलेश ने कहा—अच्छा तो तुम जाकर भेज दो, मुझे एक मिनट भी देर न होगी।

शैलेश मानो उछलता हुआ जाकर बाथरूम (नहाने के कमरे) में घुस गया। उसने मन में कहा कि मैं भी बड़ा सनकी

हूँ ! मियाँ-बीवी के झगड़े को, पति-पत्नी की दिखाऊ युद्ध-घोषणा को, भीष्म पितामह की अटल प्रतिज्ञा जानकर रात भर बेचैनी में बीती थी, सबेरे के वक्त इस बात का ख़याल करके उसे हँसी ही नहीं आई, बल्कि शर्म भी मालूम हुई। गिरिस्ती चलाने में ज़रा सा मतभेद या दो-चार कड़े-कड़े सवाल-जवाब होते ही औरतें अगर पति का घर छोड़कर भाई के घर में जाकर रहने लग जातीं, तो इस दुनिया के अन्दर शायद मनुष्य नाम का कोई जीव ही नज़र न आता। सोमेन की मा अगर होती तो दस-पाँच दिन मायके में रहने का डर था भी; किन्तु उषा सरीखी ख़ालिस सनातनधर्मी हिन्दू के आदर्श पर गढ़ी हुई औरत—जिसे धर्म और स्वामी के अलावा संसार में और कोई चिन्ता की चीज़ ही नहीं है—अगर अपनी ग़ुस्से में कही हुई बात को ही, अपनी जन्म से लेकर इतने दिन की सारी शिक्षा और संस्कार को दबाकर, इनके ऊपर जाने दे, तो फिर संसार में और बाक़ी क्या रहेगा ? और, इस बात के लिए अधिक घबराने से बढ़कर पागलपन ही क्या होगा ! यह अनुभव करके शैलेश का सारा डर और चिन्ता हृदय से पुँछ सी गई, हृदय में शान्ति और प्रीति का रस भर गया। ठीक इच्छा न करके भी वह उषा के साथ विभा की और उन लोगों के शिक्षित समाज की और भी दो-चार महिलाओं की मन में तुलना करके एक साँस छोड़कर बोला—रहने दो बाबा, अब कुछ काम नहीं;

मेरे अगर कभी कोई लड़की हो तो वह अपनी माता के समान ही हो। इस ढङ्ग की शिक्षा-दीक्षा वह पावे तो मैं भगवान् को धन्यवाद दूँगा।

शैलेश चटपट ज़रूरी काम से निपटकर पाँच-छः मिनट में ही अपने पढ़ने-लिखने के कमरे में दाख़िल हो गया।

नया रक्खा गया मुसलमान ख़ानसामा चाय, रोटी, मक्खन, केक वग़ैरह सबेरे खाने का सामान लेकर हाज़िर हुआ। शैलेश एकाएक चौंक सा उठा। इन चीज़ों के खाने का ही उसे मुद्दत से अभ्यास था। बीच में कुछ ही दिन बाधा पड़ गई थी। किन्तु नौकर जब टेबिल पर यह सामान रखकर चला गया, तब उधर एक बार देखकर उसे आहार में अरुचि सी हो गई। उषा जब से घर में आई तब से इन चीज़ों के बदले निमकीन कचौड़ी आदि उसके अपने हाथ के बनाये पदार्थ सबेरे चाय के साथ खाने के लिए आते थे, वह ख़ुद मौजूद रहती थी; किन्तु आज न वह सामान था, और न उषा ही थी। यह देखकर शैलेश का खाने-पीने को जी न चाहा। केवल एक प्याली चाय केटली से ख़ुद भर ली, और ख़ानसामा को बुलाकर सब उठा ले जाने के लिए कह दिया। इसके बाद शैलेश कान खड़े करके परदे के बाहर एक अत्यन्त परिचित पैरों की आहट सुनने की प्रतीक्षा करने लगा। न खाने की कैफ़ियत कुछ कड़ाई के साथ देने का विचार करके उसने धीरे-धीरे, व्यर्थ विलम्ब करके, जब प्याले की चाय ख़तम

की तब चाय बिलकुल ठण्डी और बदमज़ा हो गई थी। लौट-कर वह आदमी ख़ाली प्याला उठा ले गया, लेकिन जिसकी चाह थी वह पैरों की आहट न सुन पड़ी—उषा उस कमरे में दाख़िल नहीं हुई।

धीरे-धीरे दिन चढ़ आया। नहा-खाकर कालेज जाने के लिए तैयार होने का समय हो गया। खाने के समय आज भी और दिनों की तरह उषा आकर पास बैठी। उसके आग्रह, यत्न या बातचीत में नित्य की अपेक्षा कोई अन्तर घर के किसी आदमी ने न देख पाया, देख पाया केवल शैलेश ने। एक ही रात में एक आदमी बिना आडम्बर और चेष्टा के कितनी दूर हट जा सकता है, यह अनुभव करके शैलेश एकदम सन्नाटे में आ गया। कालेज जाने की पोशाक पहनने के लिए अपने कमरे में घुसते ही आज पहले ही शैलेश को अपने टेबिल पर रक्खी हुई वही घर के ख़र्च के हिसाब की छोटी सी कॉपी देख पड़ी। शायद कल ही से यह कॉपी इस तरह यहाँ पड़ी हुई है, उसने उसकी ओर लक्ष्य नहीं किया; नहीं तो उषा का उसको अभी इस जगह रख जाना न तो किसी तरह सम्भव है, न सत्य ही। आज तो महीना ख़तम होने का दिन नहीं है; फिर अकस्मात् इस जगह इस कॉपी के आने का क्या प्रयोजन? तथापि शैलेश का गले में टाई बाँधना अ-समाप्त ही रह गया। कुछ तो कौतूहल के कारण और कुछ अन्यमनस्कतावश शैलेश एक-एक करके सफ़े उलटने लगा,

और अन्त को एकदम आख़िरी सफ़े पर आकर रुका। हर एक सफ़े में वही एक ही हिसाब—वही मछली, सागभाजी, परवल, चावल, दूध वग़ैरह के दाम, नौकरों की तनख़्वाह की रक़म का लेखा—था; कल तक के जमा-ख़र्च की 'मिध' मिलाकर बाक़ी रक़म की संख्या स्पष्ट करके अन्त के सफ़े में लिख दी गई थी। इस कॉपी में हिसाब का लिखना जिस दिन शुरू किया गया था उस दिन शैलेश प्रयाग में था। उस समय भी शैलेश का हाथ इसमें नहीं था, और आज अगर इस हिसाब के लिखने की इतिश्री इसी जगह पर हो जाय, तो उसमें भी उसी तरह उसका हाथ नहीं है। बहुत देर तक शुरू के, पहले दिन के, पहले पन्ने पर दृष्टि स्थापित करके शैलेश एकटक ताकता रहा। यह चीज़ उसके घर में दो दिन की एक घटना है। यह हिसाब उसके यहाँ पहले भी नहीं लिखा जाता था, और अगर आइन्दा भी न लिखा जाय तो उसकी गिरिस्ती का काम चलता ही रहेगा। दो दिन के बाद शायद वह ख़ुद ही भूल जायगा। तो भी न जाने क्या-क्या और कितनी बातें आज इस समय याद आ रही हैं। कॉपी को बन्द करके शैलेश फिर टाई बाँधने में लग गया। आज इस समय यही बात उसे सबसे बड़ी और महत्त्व की मालूम पड़ने लगी कि इस दुनिया में किसी वस्तु का मूल्य निश्चित रूप से निर्दिष्ट नहीं किया जा सकता। इसी कॉपी की, इसी हिसाब लिखने की एक दिन बेहद ज़रूरत जान पड़ती

थी, और आज के दिन वही सब बिलकुल व्यर्थ होने जा रहा है।

अन्त को पोशाक पहनकर शैलेश जब घर के बाहर निकल गया, तब मन में हज़ार इच्छा रहने पर भी वह उषा को बुलाकर उससे कोई बात नहीं पूछ सका। अज्ञात भविष्य के बीच उसका मन बारम्बार सिर पटक-पटककर मरने लगा, मगर तो भी अनिश्चित आशङ्का को सुनिश्चित दुर्घटना के रूप में पक्की कर लेने का तनिक सा साहस वह अपने भीतर किसी तरह ढूँढ़कर नहीं निकाल सका।

११

कालेज में छुट्टी होने के बाद शैलेश अपने घर न जाकर सीधे विभा के यहाँ गया। जाकर देखा, उसने जो अनुमान कर रक्खा था वह सोलहों आने ग़लत नहीं निकला। उसके बहनोई साहब ने अदालत की यात्रा करके आज नाग़ा कर दी थी, और इतने ही समय के दरम्यान पति-पत्नी के बीच समझौता या सुलह हो चुकी थी। देखकर शैलेश को सन्तोष हुआ, मन के ऊपर से मनों का एक बोझ सा उतर गया। शैलेश ने कहा—क्यों विभा, सोमेन को ले आने के लिए तुमने कोई आदमी नहीं भेजा आज?

विभा कुछ कहनेवाली ही थी, कि बीच ही में क्षेत्र बाबू कह उठे—जनाब, हाथी जो ख़रीद रहा था वह तो चल दिया।

शैलेश—इसके मानी ?

"तुमने यह क़िस्सा नहीं सुना ? कोई शराबी नशे की झोंक में राजा का हाथी ख़रीदना चाहता था। दूसरे दिन सामने बुलाकर राजा ने उससे इस गुस्ताख़ी का जवाब तलब किया, तो वह हाथ जोड़कर बोला—सरकार, हाथी की मुझे तो कुछ ज़रूरत नहीं है। उसका असली ख़रीदार जो था, वह चला गया।" इतना कहकर क्षेत्र बाबू अपनी रसिकता पर आप हँसने लगे हँसी थमने पर फिर बोले—यह क़िस्सा भाभी को सुनाना। कह देना कि उस दिन की बात पर नाराज़ न हों। शैलेश, असली ख़रीदार अब नहीं है, चल दिया। और, अगर मा से अधिक बुआ लड़के को अच्छा बना सके, उसकी भलाई कर सके, यही तुम लोगों का मत हो, तो फिर न होगा मैं ही मर-खपकर किसी तरह विभा को एक हाथी ख़रीद दूँगा।

विभा से छिपाकर ओंठों के भीतर ही भीतर क्षेत्र बाबू हँसने लगे।

किन्तु इस हास्य में शैलेश नहीं शामिल हुआ। पीछे इस मसख़रेपन की मामूली बातों के ज़रिए विभा का सुप्त कोप कहीं फिर न जाग पड़े, इसी डर के मारे वह प्राणपण से अपने को रोके हुए चुप्पी साधे रहा।

क्षेत्रमोहन ने लज्जित होकर पूछा—मामला क्या है जी ?

शैलेश—विभा की बातों से मैं सोमेन के सम्बन्ध में बहुत कुछ निश्चिन्त हो गया था। किन्तु जब वह प्रबन्ध न हो पावेगा तब फिर मुझे कोई नई व्यवस्था करनी पड़ेगी।

क्षेत्र०—यानी डाइन (सौतेली मा) के हाथ में लड़का सौंपना ठीक नहीं, उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। क्यों न ?

शैलेश—इस कटूक्ति का उत्तर न देकर भी यह कहा जा सकता है कि उषा अब यहाँ नहीं रहना चाहती, शीघ्र ही चली जायगी।

क्षेत्र०—चली जायँगी ! कहाँ ?

शैलेश—जहाँ से आई थी—अपने भाई के घर।

क्षेत्र बाबू के मुख का भाव बहुत ही गम्भीर अथवा चिन्ताकुल हो गया। उन्होंने अपनी पत्नी के मुख की ओर कटाक्ष करके कहा—मुझे इसी तरह का कुछ होने की शङ्का हो रही थी शैलेश।

विभा ने अब तक एक अक्षर भी मुँह से नहीं निकाला था। इस समय पति के कण्ठ-स्वर से ही वह उनके भाव को जान गई। लेकिन फिर भी मुँह फेरकर शान्त-सहज-संयत स्वर में ही उसने पूछा—भैयाजी, भला सच बतलाना, क्या तुम मुझे ही निमित्त करके (अर्थात् मेरे ही कहने-सुनने पर ध्यान देकर या मेरे ही कहने से) भाभी के सम्बन्ध में यह व्यवस्था करने जा रहे हो ? अगर यही बात हो तो मैं मना

न करूँगी। किन्तु यह अभी कहे देती हूँ कि एक दिन तुम दोनों ही रोओगे।

शैलेश ने गरदन हिलाकर जताया कि नहीं, यह बात नहीं है।

अब शैलेश ने मुसलमान नौकर की नई नियुक्ति से शुरू करके आज सबेरे के समय उस हिसाब की कापी के उल्लेख तक सिलसिले से ब्योरेवार सारा हाल बयान करके कहा—मैंने न तो चले जाने के लिए कहा है, और न जाने में रोक-टोक ही करूँगा। आत्मीयों और मित्रों की मण्डली में इस विषय की आलोचना या चर्चा अवश्य उठ खड़ी होगी, यह मैं निश्चय ही जानता हूँ; किन्तु अपनी एक बड़ी भारी भूल का संशोधन हो जाने के लिए मैं भगवान् को आन्तरिक धन्यवाद दूँगा।

विभा चुप्पी साधे बैठी रही। क्षेत्रमोहन ने भी देर तक अपनी कोई राय नहीं ज़ाहिर की।

शैलेश ने फिर कहा—तुम लोगों को सब जताना अपना कर्तव्य होने के कारण उसी के लिए आज मैं आया हूँ। मेरा मतलब यही है कि कम से कम तुम दोनों आदमी मुझे और का और न समझ बैठो।

क्षेत्रमोहन ज़ोर से सिर हिलाते हुए कहने लगे—ना, ना, क्या मजाल! ऐसा हो ही नहीं सकता।—हाँ जी, यह तो बतलाओ शैलेश, वह जो एक दफ़े भवानीपुर में व्याह की

बातचीत चली थी उसका क्या हुआ ? इस बीच में इधर उन लोगों ने कुछ टोह-वोह ली थी क्या ?

शैलेश को असह्य हो उठा। वह खीझकर बोला—तुम्हारा यह इशारा इतना बेहूदा और नीच जनोचित है कि अपने को सँभालना कठिन है। तुमको केवल यही समझकर क्षमा किया जाता है कि तुमको इसकी ख़बर नहीं है, कि तुम किस जगह आघात कर रहे हो।

यह कहकर शैलेश भीतर की ऊष्मा के मारे एक बार हिल-डुलकर फिर सीधा होकर बैठ गया।

क्षेत्र बाबू ने उसके मुख की ओर देखकर अविचलित भाव से अत्यन्त सहज में शैलेश के कथन को स्वीकार करते हुए कहा—तुम्हारा कहना ठीक ही है। जगह तुम्हारी कहाँ है, यह बेशक मैं ठहरा नहीं पाया।

इस व्यंग्योक्ति से बेहद चोट खाकर शैलेश तिलमिला उठा, और जलकर कह उठा—तुमने उस दिन अपनी स्त्री ही के साथ जो व्यवहार किया, उसके देखते मैं भला और क्या अधिक तुमसे प्रत्याशा कर सकता हूँ! तुम्हारे दम्भ या घमण्ड को धक्का लगेगा, यही सोचकर मैं आज तक टालता ही गया हूँ, कभी कुछ नहीं कहा। मगर जान पड़ता है, बहुत पहले ही कह देना मुनासिब था।

क्षेत्र बाबू ज़रा बाँकी मुसकी छाँटकर बोले—सच कहते हो शैलेश, it reminds ;—स्त्री के साथ व्यवहार! इसको

तो आज तक ठीक-ठीक सीख नहीं सका हूँ—सीखने की अवस्था भी बीत गई—किन्तु तुम अगर कहीं इस विषय की एक किताब लिख जा सकते भैया तो बहुत अच्छा होता। अच्छा, तुम भाई-बहन दोनों तब तक एकान्त में सलाह करो, मैं अभी आया।

अब क्षेत्र बाबू एकाएक उठ खड़े हुए, और तेज़ी के साथ बाहर निकल गये।

शैलेश ने चिल्लाकर कहा—किताब लिखने में देर भी हो सकती है, तब तक ज़बानी ही सुने जाओ। यह जो तुमने भवानीपुर का उल्लेख करके आवाज़ा कसा, सो वे लोग कोई मेरी टोह लें चाहे न लें, मुझे आप ही इसके लिए उद्योग करके उधर की ख़बर लेनी पड़ेगी।

क्षेत्र बाबू ने दरवाज़े के बाहर ही से इतना ही उत्तर दिया—अवश्य लेनी पड़ेगी। यों ही बहुत विलम्ब हो गया है।

दूसरे दिन सबेरे ही क्षेत्रमोहन पटलडाँगे में उपस्थित होकर शैलेश के घर पहुँचे। शैलेश नहाने की तैयारी में था। अकस्मात् बेवक़्त बहनोई को देखकर उसे बड़ा आश्चर्य हुआ। कल की अत्यन्त अप्रिय जली-कटी बातों के बाद अयाचित भाव से इस तरह क्षेत्रमोहन के आने की उसे आशा न थी। मन ही मन थोड़ी सी लज्जा का अनुभव करके शैलेश ने कहा—आज क्या हाईकोर्ट बन्द है जी?

क्षेत्र बाबू ने हँसते हुए कहा—यह प्रश्न फ़िज़ूल है।

शैलेश ने फिर पूछा—प्रैक्टिस छोड़ दी क्या ?

क्षेत्र बाबू ने उसी तरह उत्तर दिया—यह उससे बढ़कर फ़िज़ूल सवाल है।

शैलेश—शायद मैं भी फ़िज़ूल ही हूँ। मेरे नहाने का वक़्त है शायद इससे निबटने में तुमको कोई आपत्ति न होगी ?

क्षेत्र०—बिलकुल नहीं। तुम जा सकते हो।

अब क्षेत्र बाबू ने उषा के पास जाकर कहा—भाभी साहबा, क्या मैं आ सकता हूँ उस जगह ?

इस दालान में पूजा-पाठ का स्थान न था। सोने के कमरे ही में एक ओर आसन बिछाकर उषा अपने पूजा-पाठ की तैयारी कर रही थी। आवाज़ पहचानकर भीगे बालों पर धोती का आँचल डालकर उसने बुलाया—आइए।

क्षेत्रमोहन भीतर घुसते ही कुछ अप्रतिभ होकर बोले—बेवक़्त आकर मैंने आपको दिक़ किया। अचानक मायके जाने का विचार कर बैठी हो क्या ? आपके पिताजी क्या बीमार हैं ?

उषा—पिताजी हैं ही नहीं।

क्षेत्र०—ओः, तो क्या मा की तबीयत अच्छी नहीं है ?

उषा—वे तो पिता से भी पहले स्वर्ग सिधार गई थीं।

क्षेत्र बाबू ने अत्यन्त विस्मय प्रकट करके पूछा—तो फिर आप कहाँ, किसके पास, जा रही हैं ? वहाँ है कौन ?

ऐसी जगह तो किसी तरह जाना नहीं हो सकता। शैलेश की बात छोड़ दीजिए, हमी लोग तो पहले राज़ी नहीं हो सकेंगे।

उषा सिर झुकाये ही मुसकिराकर बोली—न हो सकिएगा?

क्षेत्र०—नहीं, किसी तरह नहीं।

उषा—लेकिन इतने दिन तो मेरे उसी भाई के घर में बीते हैं क्षेत्र बाबू! और, यहाँ भी तो कुछ अड़चन न थी, सब काम चला जाता था।

क्षेत्र०—ख़ैर, अगर जाना ज़रूरी है तो वहाँ से कब लौटिएगा, यह सच-सच बतलाते जाइए। नहीं तो फिर किसी तरह न जाने पाइएगा।

उषा चुप हो रही। क्षेत्र बाबू ने फिर पूछा—लेकिन सोमेन का क्या होगा?

उषा—उसकी बुआ हैं।

एकाएक हाथ जोड़कर क्षेत्रमोहन कहने लगे—वह मेरी स्त्री है। मैं उसकी ओर से क्षमा की प्रार्थना करता हूँ।

उषा चुप रही।

क्षेत्र०—क्षमा न कर सकिएगा?

उषा उसी तरह चुपचाप सिर झुकाये बैठी रही। कुछ देर तक उत्तर की राह देखकर क्षेत्रमोहन ने एक साँस छोड़कर धीरे-धीरे कहा—जगत् में जब अपराध है तब उसके

लिए दुःख-भोग भी है, और होना ही चाहिए। किन्तु इसका इन्साफ़ क्यों नहीं है, आप बतला सकती हैं ?

उषा ने कहा—अर्थात् एक आदमी के अपराध का दण्ड दूसरे को क्यों भोगना पड़ता है, यही न ? मैं इतना ही जानती हूँ कि भोगना पड़ता है। क्यों भोगना पड़ता है, यह मैं नहीं जानती क्षेत्रमोहन बाबू।

क्षेत्र०—आप कब जाइएगा ?

उषा—बिदा कराने के लिए दादा के आते ही चली जाऊँगी। सम्भव है, वे कल ही आ जायँ।

क्षेत्र बाबू क्षण भर चुप रहने के बाद बोले—मैंने सोचा था कि एक बात कभी आपको नहीं बतलाऊँगा। किन्तु आज, जान पड़ता है, उसे छिपा रखने से मुझे दोष का भागी होना पड़ेगा। आपके आने के पहले इस घर में और एक व्यक्ति के आने की सम्भावना हुई थी। मुझे जान पड़ता है, उस षड्यन्त्र का अभी एकदम अन्त नहीं हो गया है।

उषा—मैं जानती हूँ।

क्षेत्र०—तो फिर क्या रूठकर अन्त को वही षड्यन्त्र सफल होने दीजिएगा ? इसी से क्या—

बात ख़तम नहीं होने पाई, उषा शान्त-दृढ़ स्वर से बीच ही में बोल उठी—सफल हो या विफल, क्षेत्रमोहन बाबू, मुझे क्षमा कीजिए।

हाथ जोड़कर उषा ने इतनी देर बाद क्षेत्रमोहन की ओर आँख उठाकर देखा।

उस दृष्टि के सामने क्षेत्रमोहन विस्मित होकर ताकते रह गये।

१२

शैलेश ने स्त्री से बोलना-चालना बन्द कर दिया, पर उषा वैसे ही बोलती-चालती रही। उसके आचरण में रत्ती भर भी परिवर्त्तन न देख पड़ता था; वह उसी तरह घर का कामकाज ठीक-ठीक करती जाती थी। मुँह फोड़कर शैलेश उससे कुछ पूछ नहीं सकता, पर सबसे अधिक कठिनता उसे यह सोचकर हुई कि जो आदमी इस घर को हमेशा के लिए छोड़े जा रहा है, उसे उसी घर पर इतनी ममता कैसे बनी हुई है। आज सबेरे ही शैलेश ने सुना कि दीवार में गन्दे हाथ पोंछ देने के लिए उषा अपने नये नौकर को फटकार रही है। मान लिया कि अभ्यास होने के कारण उषा से अपने किसी काम में ग़ल्ती नहीं होने पाती; लेकिन सर्वत्र सभी बातों में उसकी चौकस दृष्टि ऐसी बनी रहती है कि उसमें भी तनिक सी शिथिलता शैलेश नहीं देख पाता! यह सच है कि उषा को अच्छी तरह जानने-पहचानने का अवसर या समय शैलेश को नहीं मिला, उसे उसने बहुत साधारण ही जाना-पहचाना है, तथापि उस थोड़ी सी जानकारी में

उसने इतना अवश्य जान लिया है कि अब उषा का यहाँ से जाने का इरादा टल नहीं सकेगा। किन्तु साधारण मनुष्य-चरित्र की जितनी जानकारी इतनी आयु में वह प्राप्त कर चुका है उसके साथ यह इतनी बड़ी असङ्गति, हँसी और आँसू एक साथ पैदा करके, उसके मन को मानो लगातार हिंडोले के से झोंके दे-देकर मारे डाल रही थी।

क्षेत्रमोहन आकर सीधे रसोई-घर के दरवाज़े पर दिखलाई दिये। उन्होंने कहा—प्रसाद मिलने में अब और कितनी देर है भाभीजी ?

उषा ने सिर पर धोती का आँचल और आगे खिसका कर मुसकिराकर कहा—अपने बड़े साले साहब से पूछ आइए, यहाँ तो सब तैयार है।

क्षेत्रमोहन ने कहा—आप हारनेवाली औरत ही नहीं हैं, मैं ही हार गया। रसोई के सामान देखकर इस भरे पेट में भी खाने का लोभ होता है भाभीजी; मगर डर लगता है, कहीं तबीयत ख़राब न हो जाय। पर न्यौता ख़ारिज करने से काम न चलेगा, और किसी दिन आकर खा जाऊँगा।

उषा चुप रही। क्षेत्रमोहन ने पूछा—आपका लड़का कहाँ है ?

उषा ने कहा—आज उसे न जाने क्या धुन सवार हुई कि किसी तरह स्कूल जाता ही न था। किसी तरह कुछ खिला-पिलाकर अभी स्कूल भेजा है।

क्षेत्र०—वह आपको बहुत प्यार करता और मानता है। (ज़रा हँसकर) अच्छा हाँ, आपके मायके जाने के प्रस्ताव का क्या हुआ? सच तो यह है भाभीजी, अगर ग़ुस्से के ज़ोर में आपके मुँह से भी कोई असङ्गत बात निकल जाय तो फिर भरोसा करने लायक़ संसार में और कुछ भी नहीं रहने का!

उषा ने इस अभियोग का कुछ उत्तर नहीं दिया, सिर नीचा किये चुप बैठी रही। वहाँ से निकलकर क्षेत्रमोहन शैलेश के पढ़ने-लिखने के कमरे में गये। वह आईने के सामने खड़ा बाल सँवार रहा था। आहट पाकर घूमकर खड़ा हो गया।

क्षेत्रमोहन ने पूछा—कॉलेज क्या आज बन्द है जी?

शैलेश—नहीं। हाँ, पहले के दो घण्टे क्लास नहीं है।

क्षेत्रमोहन ने एक साँस छोड़कर कहा—मज़े में हो! किन्तु भाभीजी के मायके जाने का प्रबन्ध तुमने क्या किया है?

शैलेश—प्रबन्ध जो कुछ करना है, वह उसके चले जाने पर करूँगा। सुनता हूँ, कल उसके दादा आकर उसे ले जायँगे।

क्षेत्र०—तुम पागल हो। इस स्त्री के साथ तुम निर्वाह न कर सकोगे भाई, तो आओ हम तुम दोनों अदला-बदली कर लें। तुम भी सुख से रहो, और मैं भी सुख से रहूँ।

शैलेश ने बहुत ही खीझकर कहा—उमर तो तुम्हारी बहुत हो चुकी क्षेत्र बाबू, अब यह बेहूदा मसख़रापन छोड़ न दो।

क्षेत्र०—छोड़ तो दूँ भाई, पर तुम लोगों का व्यवहार जो छोड़ने नहीं देता। उन्होंने अत्यन्त व्यथा पाकर कहा कि बाप के घर चली जाऊँगी, और तुमने फ़ौरन् उत्तर दिया कि जाओगी तो जाओ, भवानीपुर का मामला अभी मेरे हाथ से निकल नहीं गया।—यह कैसा व्यवहार है? भाई-बहन दोनों एक ही साँचे में ढले हुए हो। ख़ैर, मैं सब उलट-पुलट आया हूँ। उनका जाना न होगा। लेकिन तुम अब खोदकर घाव न करना। (एकाएक घड़ी की ओर देखते ही चौंककर) ओः, बहुत देर हो गई! अब जाता हूँ, कल सबेरे ही आऊँगा।

जाने के लिए घूमकर एकाएक स्वर धीमा करके कहा—कुछ दिन तक ज़रा निबाह करते रहो शैलेश। अध्यापक पण्डित के घर की लड़की ठहरी, अनाचार सह नहीं सकती। ये खाने-पीने की चीज़ें दो दिन न खाओगे तो क्या होगा! इसके सिवा यह सब खाना-पीना अच्छा भी तो नहीं है। ख़र्च ही का ख़याल करके देखो न! अच्छा, जाता हूँ भाई।

उत्तर की प्रत्याशा न करके क्षेत्र बाबू जल्दी से चले गये।

शैलेश कुछ देर तक स्तब्ध होकर मूर्त्ति की तरह खड़ा रहा। क्षेत्रमोहन कब आये, क्या कहा, और किस तरह क्या करके एकाएक सब मामला उलटाकर चले गये, यह वह

सोच ही न पाया। बैरा ने आकर ख़बर दी कि खाना परोसा जा चुका है। उत्तर ओर के छाये हुए बरामदे में आसन डालकर भोजन के लिए जगह की गई थी। रोज़ की तरह बहुत सा सामान और सालन परोसकर कुछ फ़ासले पर उषा बैठी थी। शैलेश सिर झुकाकर खाने के लिए बैठ गया। कई दफ़े उसका जी चाहा कि क्षेत्र बाबू जो कुछ कह गये थे उसकी आमने-सामने जाँच करके समयोचित दो-चार मीठी बातें कह जाय; किन्तु किसी तरह सिर न उठा सका, किसी तरह वह बात न पूछ सका। सोमेन का बहाना करके भी उस विषय की चर्चा न छेड़ सका। अन्त को भोजन कर चुकने पर चुपचाप उठकर चल दिया।

१३

दूसरे दिन सबेरे अविनाश (उषा का छोटा भाई) आ गया। शैलेश वैसे ही हाथ-मुँह धोकर रीडिंग-रूम में चाय पीने जा रहा था। घर के भीतर उस अपरिचित पुरुष को देखते ही उसका कलेजा धक से हो गया। पूछा—"आप कौन हैं?" आनेवाले ने अपना परिचय दिया कि वह उसका छोटा साला यानी उषा का छोटा भाई है। अविनाश ने कहा—दादा ख़ुद नहीं आ सके, इसी से दीदी को बिदा करा ले जाने को मुझे भेज दिया है।

"अच्छा तो ले जाइए" कहकर शैलेश अपनी बैठक में घुस गया। वहाँ सबेरे के कलेवे का सामान एक टेबिल पर

सजाया रक्खा था; लेकिन सिर्फ़ एक प्याली चाय उँडेलकर वह आराम-कुर्सी पर आकर बैठ गया। बाक़ी सामान पड़ा रहा। उसे छूने को भी उसका जी न चाहा। उषा के मायके से किसी के आकर उसे ले जाने की बात निश्चित थी। इस पहलू से अविनाश को देखकर शैलेश के चौंकने या भड़कने की कोई बात न थी, और उसके आने से उषा को जाना ही होगा, यह कुछ आवश्यक न था—शायद अन्त तक उषा का जाना नहीं ही हो—किन्तु इस बारे में निश्चित रूप से कुछ मालूम न होने तक शैलेश के शरीर और मन की जो दशा होने लगी उसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। आज सबेरे ही क्षेत्रमोहन आने के लिए कह गये थे; किन्तु वे भूल ही गये, या किसी काम में फँस गये, यही आशङ्का मानो एकाएक उसकी अन्य आशङ्काओं से बढ़ जाना चाहने लगी! क्षेत्रमोहन आ जायँ तो, चाहे जो हो, इसकी मीमांसा तो हो जाय। इसी का उसे इस समय अत्यन्त प्रयोजन जान पड़ने लगा। अधैर्य की उत्तेजना में उसे यही डर लगने लगा कि कहीं वह अपने को न रोक रख सके, कहीं वह आप ही जाकर उषा से यह न पूछ बैठे कि कल जाने के बारे में क्षेत्रमोहन से उससे क्या बातचीत हुई थी। शैलेश मानो अपने ऊपर विश्वास नहीं कर पाता था। इसी तरह घड़ी की ओर ताकते-ताकते जब ऐसा हुआ कि समय बीतने ही न आता था, उसी समय द्वार पर का भारी

पर्दा हटाकर जिस व्यक्ति ने एकाएक प्रवेश किया, उसकी बिलकुल प्रत्याशा न थी; वह क्षेत्रमोहन नहीं, अविनाश था। शैलेश ने सिर उठाकर उसे देखा, और सामने से एक किताब उठाकर देखने लगा। उसके सारे शरीर में किसी ने आग-सी लगा दी।

अविनाश बैठने जा रहा था, किन्तु सामने रक्खी हुई खाने की सामग्री पर नज़र पड़ते ही उस तरफ़ की एक कुर्सी को और भी कुछ दूर हटाकर तब उस पर बैठा। घर का मालिक अभ्यर्थना करेगा, यह आशा शायद उसे न थी। किन्तु शैलेश ने जब उसके बैठक में इस समय आने का कोई कारण तक न पूछा तब अविनाश को ही अपनी ओर से बोलना पड़ा। उसने कहा—इसी ढाई बजे की गाड़ी से दीदी जाना चाहती हैं।

शैलेश ने किताब से सिर उठाकर कहा—जाना चाहती हैं? क्यों, मेरी ओर से क्या कुछ रुकावट डाले जाने का तुम्हारी बहन को खटका है?

इस बिलकुल असंलग्न बात का उत्तर कमसिन लड़के अविनाश को न सूझा। उसने यही कह दिया—जी नहीं।

दरवाज़े के बाहर चूड़ियों की खनक सुनकर शैलेश का मन और भी ख़राब हो गया। वह और भी कुढ़ गया। उसने कहा—नहीं, मेरी तरफ़ से जाने की मनाही नहीं है।

अविनाश चुप हो रहा। शैलेश ने फिर पूछा—सुना था, तुम्हारे दादा आनेवाले थे। वे क्यों नहीं आये?

अविनाश ने सङ्कोच के साथ धीरे-धीरे कहा—उनकी तो मुझे भेजने की कुछ वैसी इच्छा नहीं थी।

शैलेश—क्यों ?

अविनाश चुप रहा।

शैलेश—तुम अभी लड़के हो। तुमसे सब बातें नहीं कही जा सकतीं, और कहने से कुछ लाभ भी नहीं। मगर हाँ, तुम्हारे दादा अगर कभी पूछें तो कह देना कि इसमें उषा का कुछ दोष नहीं है, दोष या भूल अगर किसी की हो तो मेरी ही है। उषा को ले आने के लिए आदमी भेजना मुझे ही उचित न था।

तनिक ठहरकर फिर शैलेश कहने लगा—मुझे जान पड़ता था कि पिताजी बहू को न बुलाकर अन्याय कर गये हैं। बहुत दिन बाद अवस्थावश जब समय आया तब मैंने सोचा कि अब उस अन्याय या ग़लती का सुधार होगा। तुम्हारी बहन आई अवश्य, लेकिन पहले का एक दोष अब सौ दोष होकर दिखलाई दिया।

भला इसका उत्तर क्या था! अविनाश चुप रहा। इसी समय अकस्मात् दूसरी ओर के दरवाज़े को ठेलकर भीतर क्षेत्रमोहन ने प्रवेश किया। शैलेश ने उनकी ओर देखा ज़रूर, लेकिन उसकी ज़बान नहीं रुकी। कठोर बातों का कुछ स्वभाव ही यह होता है कि वे अपने ही बोझ से आप कड़ी से कड़ी होती जाती हैं। उषा दरवाज़े की आड़ में खड़ी है, यह

जानकर अचूक निशाने से उसे निरन्तर घायल करते जाने की निष्ठुर उत्तेजना में ज्ञान-शून्य होकर शैलेश उसी सिलसिले में कहता चला गया।—तुम्हारी बहन से मैंने एक दिन ब्याह किया था, यह सच है; किन्तु उसे सहधर्मिणी किसी तरह नहीं कहा जा सकता। हम दोनों की शिक्षा, दीक्षा, समाज या धर्म, कुछ भी एक नहीं है। ज़बरदस्ती उसे अपने घर में रखने के लिए अपने घर को अगर मैं स्मृतिशास्त्र की पाठशाला बना डालूँ तो मेरी एक-मात्र छोटी बहन दुःख और क्षोभ के मारे सब सम्बन्ध तोड़कर ग़ैर बनी जाती है; एकमात्र लड़का बुरी शिक्षा और बुरे आदर्श से अनुप्राणित होकर बिगड़ा जाता है। यह अनर्थ तो मैं किसी तरह होने नहीं दे सकता। हाँ, तुम्हारी बहन का इसके लिए अवश्य कृतज्ञ हूँ कि जो बात मैं अपने मुँह से नहीं कह सकता था, उस कठिन कर्त्तव्य को उसी ने पूरा कर दिया।

क्षेत्रमोहन विस्मय से दङ्ग होकर शैलेश की ओर ताक रहे थे। शैलेश शरमीला, दुर्बल प्रकृति का आदमी था; इस तरह की कोई कड़ी कड़वी बात अपने मुँह से निकालना बिलकुल ही उसके स्वभाव के विरुद्ध था। किन्तु इस समय पागल की तरह वह यह क्या बक रहा है! उषा का छोटा भाई उसे ले जाने के लिए आया है, यह ख़बर क्षेत्रमोहन पहले ही पा गये थे, अतएव यह अपरिचित पुरुष वही उषा का भाई है, इसमें उन्हें ज़रा भी सन्देह न रहा। उसी के

सामने यह सब क्या ख़ुराफ़ात बक रहा है! क्षेत्रमोहन व्यग्र होकर अनुनय के साथ हाथ जोड़कर कह उठे—"देखिए, यह सब अपनी बहन को एक अक्षर भी जानने न दीजिएगा।" उस अपरिचित लड़के ने दरवाज़े की ओर उँगली से इशारा करके सिर हिलाकर कहा—मुझे कुछ जताना नहीं पड़ेगा, बाहर खड़ी हुई दीदी ख़ुद सब सुन रही हैं।

क्षेत्र०—बाहर खड़ी हुई हैं? उस जगह?

उस लड़के के कुछ कहने के पहले ही शैलेश ने स्पष्ट कह दिया—हाँ, यह मैं जानता हूँ क्षेत्र बाबू, वह उस जगह खड़ी सुन रही है।

यह उत्तर सुनकर क्षेत्र बाबू सन्नाटे में आ गये। वे विवर्ण मुख लिये वहीं बैठे रहे।

उसी दिन दो-तीन घण्टे के बाद बहन को लेकर अविनाश जब स्टेशन की ओर रवाना हुआ तब सोमेन अपनी बुआ के घर में था, उसका पिता कालेज में और क्षेत्रमोहन बाबू बार-लाइब्रेरी में बैठे थे।

दूसरे दिन सबेरे चाय के टेबिल पर बैठी हुई विभा ने स्वामी से कटाक्ष करके पूछा—दादा क्या करते थे?

क्षेत्रमोहन ने कहा—देखने को तो हाथ में एक किताब लिये बैठे थे, लेकिन असल में शायद अपनी बेवकूफ़ी पर पछतावा कर रहे थे।

विभा—यह काम तुम कब करोगे?

क्षेत्र०—कौन काम? किताब पढ़ना या पछतावा?

विभा ने कहा—किताब लेकर पढ़ना तो अब तुम्हें सोहेगा नहीं, मैं दूसरे काम के लिए कह रही हूँ।

क्षेत्रमोहन ने खोंचा खाकर कहा—वह तो, जान पड़ता है, भाई को बुलाकर तुम्हारे बाप के घर चले जाते ही कर सकता हूँ।

विभा का मन आज प्रसन्न था, इसी से आज उसने गुस्सा नहीं किया। बोली—वह तो शायद मुझसे हो न सकेगा। क्योंकि कट्टर हिन्दूपन का जप-तप और छुआछूत की कला लड़कपन से ही सीखने की सुविधा मुझे नहीं मिली।

स्त्री की बातों से आजकल क्षेत्र बाबू अक्सर खीझ उठा करते थे। लेकिन इस समय क्रोध को दबाकर सहज स्वर में उन्होंने कहा—इसे बहुत बड़ी बदनसीबी कहनी चाहिए, जो तुम्हें इसका सुयोग नहीं मिला। मिलता तो शायद आज तुम्हारे दादा को इतनी बड़ी विडम्बना नसीब न होती!

क्षेत्रमोहन वहाँ से उठकर चल दिये।

१३

भवानीपुर की उसी पूर्व-वर्णित सुशिक्षित कन्या को अच्छे वर (अर्थात् शैलेश) के साथ ब्याहने की चेष्टा फिर शुरू हो गई। केवल विभा अबकी दफ़े स्वामी के हार्दिक असन्तोष या रोष के डर से, प्रकट रूप से, इस चेष्टा में शामिल न हो

सकी। किन्तु अनेक प्रकार से इस बारे में अपनी गुप्त सहानुभूति दिखाने से फिर भी बाज़ न आती थी। कन्या-पक्ष के बहुत अधिक अनुरोध करने से लाचार होकर एक दिन क्षेत्रमोहन ने अपने साले शैलेश से ख़ुलासा इस बारे में उसकी इच्छा जानने के लिए प्रश्न किया। शैलेश ने फिर विवाह करना नामंजूर करते हुए सहज स्वर में कहा—क्षेत्र बाबू, जीवन का अधिक भाग तो बीत ही गया, थोड़े दिनों के लिए फिर नया झंझट मोल लेने की, सिर पर नया बोझ लादने की, अब हिम्मत नहीं होती। सोमेन है, उसको बल्कि तुम लोग यह आशीर्वाद दो कि वह जीता रहे। अब फिर व्याह करने का कुछ काम नहीं।

आदमी की निष्कपट भाव से कही हुई बात छिपी नहीं रहती। आज शैलेश के मुँह से निकला हुआ यह हृदय का सच्चा उद्गार सुनकर सचमुच क्षेत्र बाबू को दुःख हुआ। इसके बाद से क्षेत्र बाबू अक्सर रोज़ ही अदालत से लौटते वक़्त शैलेश के पास आने लगे। घर में घरवाली नहीं है, सन्तान भी नहीं है, केवल तीन-चार नौकर मिलकर घर-गिरिस्ती का धन्धा चलाते हैं। देखते-देखते घर में ऐसी विशृङ्खल अस्तव्यस्तता नज़र आने लगी कि उसे देखकर क्लेश का अनुभव हुए बिना रह नहीं सकता था। लगभग महीने भर से अधिक समय बीत जाने पर एक दिन क्षेत्र बाबू ने उसी पहले प्रसङ्ग को उठाकर फिर कहा— शैलेश बाबू, तुम तो

भाभीजी के बारे में मेरे मन का भाव जानते हो। किन्तु कोई एक अपना आदमी घर में रहे बिना ज़िन्दगी भारू हो जाती है। ख़ासकर इस बुढ़ापे में—

उमा आज यहाँ मौजूद थी। उसने कहा—इनके बुढ़ापा आने में, भैया, अभी बहुत देर है, और उसके बहुत पहले ही भाभीजी आकर हाज़िर हो जायँगी। रूठकर कोई कब तक बाप के यहाँ रह सकता है?

इतना कहकर उमा ने एक बार अपने भाई के और एक बार शैलेश के मुख की ओर देखा। किन्तु दोनों में से कोई भी कुछ न बोला। ख़ासकर शैलेश के मुख को मानो विषाद की छाया ने ढक लिया। किन्तु उमा को अपनी ओर उसी तरह ताकते देखकर उसने ज़रा देर बाद गरदन हिलाकर इतना ही कहा—ना, वह अब न आवेगी।

उमा ने अत्यन्त अविश्वास के साथ ज़ोर देकर कहा—न आवेंगी? ज़रूर आवेंगी। शायद इसी महीने के भीतर आ जायँ। क्यों दादा, नहीं आ सकतीं?

उषा का लौट आना कितना कठिन है, यह उमा के भाई क्षेत्र बाबू बहुत अच्छी तरह जानते थे। उषा के जाने के पहले शैलेश ने जो बातें कही थीं उनमें से हरएक क्षेत्र बाबू के हृदय में स्पष्ट अङ्कित थी। वे यह सोच भी नहीं सकते थे कि उषा कभी उन बातों को भूल सकेगी। अपनी बहू के सम्बन्ध में शैलेश के पिता ने अत्यन्त अन्याय किया, उसके

बाद उषा के आने पर विभा ने ईर्ष्यावश उसका बहुत अपमान किया, और अपमान की हद ख़ुद शैलेश ने उसके जाने के दिन कर डाली। तो भी हिन्दू-नारी की शिक्षा और संस्कार का ख़याल करके—ख़ासकर उषा के मधुर चरित्र के साथ मिलान करके—क्षेत्र बाबू उषा के स्वामी का घर छोड़कर इस तरह चले जाने का किसी तरह अनुमोदन न कर पाते थे। इस बात का ख़याल करके जब उनके मन को कष्ट होता था, तभी वे यह कहकर आप अपने को समझाते और सान्त्वना देने की चेष्टा करते थे कि उषा अपने अनादर और अवहेला को यथाशक्ति सहती रही; किन्तु स्वामी ने जब उसके धर्माचरण पर आक्रमण किया तब वह फिर उस आघात को किसी तरह नहीं सह सकी।

शायद इसी कारण बहुत दिनों बाद जब उसे स्वामी ने अपने घर बुला भेजा, तब उसने रत्ती भर भी सोच-विचार नहीं किया, अपने मान-अभिमान को कुछ भी महत्त्व नहीं दिया, चुपचाप बिना कुछ विचार किये चली आई थी। हिन्दू-रमणी के इस धर्माचरण के साथ संस्कार के बन्धन से मुक्त और पुराने ख़यालों के अन्धकार से निकलकर नये ज़माने के प्रकाश में पहुँचे हुए क्षेत्रमोहन बाबू का विशेष परिचय नहीं था; क्योंकि वे ब्राह्मसमाजी थे। किन्तु इस समय अपने घर की स्त्री के साथ तुलना करके, अन्य एक व्यक्ति (उषा) के विश्वास की दृढ़ता और अपने को सब सुखों से

वञ्चित करने की शक्ति देखकर, उन्हें अपना सारा समाज ही क्षुद्र और तुच्छ-सा जँचता था। वे मन में कहते थे कि इतना सच्चा तेज तो हमारे समाज की किसी स्त्री में नहीं देख पड़ता ! उन्हें आशङ्का होती थी कि शायद यह यथार्थ धर्म ही उनके समाज से निर्वासित हो गया है। जो विश्वास अपने को पीड़ित करने में पश्चात्पद नहीं होता, जिसकी श्रद्धा की गहराई दुःख और त्याग के भीतर अपनी परीक्षा कर लेती है, वह विश्वास विभा में कहाँ है? उमा में कहाँ है? और वे तो अनेकों स्त्रियों को जानते हैं, किन्तु ऐसी स्त्री कहाँ देख पड़ती है जिससे उषा की तुलना की जाय? इसी की अनुभूति उनके हृदय को एक ओर सङ्कोच से और दूसरी ओर भक्ति से मानो परिपूर्ण किये रहती थी। इसका कारण यही था कि इन कुछ ही दिनों के बीच उषा अपने स्वामी को कितना प्यार करने लगी थी, यह तो उनसे छिपा नहीं था ! उसके बाद ही जब उन्हें यह ख़याल आता था कि सब नष्ट-भ्रष्ट करनेवाला इतना बड़ा अनर्थ केवल एक मुसलमान नौकर के लिए हो गया तब वे सन्नाटे में आ जाते थे। जिस आचार या अनाचार को उषा पसन्द नहीं करती थी, उसी के घर में फिर प्रचलित हो जाने से उसे एकदम घर छोड़कर चल देना पड़ा ! और किसी पर चाहे कुछ असर न हुआ हो, किन्तु क्षेत्र बाबू का यह हाल था कि वे अपनी सलहज का स्मरण करके उसके बारे में शैलेश की सङ्कीर्ण-हृदयता और तुच्छता

पर हैरान होकर विस्मय और क्षोभ से मानो अभिभूत हो पड़ते थे।

उमा पूर्वोक्त प्रश्न करके उनकी ओर ताक ही रही थी। उत्तर न पाकर विस्मित होकर बोली—दादा, बोलते क्यों नहीं?

क्षेत्र०—क्या उमा?

उमा—ख़ूब! मैं कहती हूँ कि भाभी शायद इसी महीने लौट आवें। तुम्हें क्या यह नहीं जान पड़ता दादा?

बहन के प्रश्न को टालकर क्षेत्रमोहन ने कहा—अगर यही मान लिया जाय कि वे अब फिर न आवेंगी तो क्या कुछ अनुचित होगा? बहुत-सा समय तो उन्होंने, यहाँ न आकर, वहीं बिता दिया है। ज़िन्दगी के बाक़ी दिन भी उनके वहीं बीत सकते हैं। लेकिन इसी लिए क्या इसका दूसरा उपाय कुछ नहीं है? मैं यही बात कह रहा था।

उमा अपने भाई की इस बात का मतलब ठीक-ठीक नहीं समझ पाई। वह चुपचाप उसी तरह क्षेत्र बाबू की ओर देखती रही।

शैलेश ने उसके विस्मय-पूर्ण मुख की ओर देखकर कहा—उसका यहाँ लौटकर आना मैं ठीक नहीं समझता उमा। वह मेरी ब्याहता अवश्य है, लेकिन उसको मैं अपनी सह-धर्मिणी नहीं कह सकता।

उषा के सम्बन्ध में, उसके विरुद्ध, इस बेहूदा इशारे से क्षेत्रमोहन मन में चिढ़ गये। उन्होंने खीझकर कहा—जब

हम लोगों के धर्म ही नहीं है तब फिर सहधर्मिणी कहाँ! ये ऊँचे दर्जे की बातें रहने दो भैया, मैं घर-गिरिस्ती का काम चलाने के लिए कुछ व्यवस्था करने का प्रस्ताव तुम्हारे आगे कर रहा हूँ।

शैलेश ने अत्यन्त आश्चर्य के साथ कहा—क्या कहा? हम लोगों के धर्म ही नहीं है!

क्षेत्रमोहन ने कहा—धर्म किस जगह है, दिखलाओ न? धन कमाते हैं, खाते-पीते और आराम करते हैं, बस। सहधर्मिणी न होने से भी हमारा काम नहीं रुकता। पहले ज़माने में लोग श्राद्ध-शान्ति, पर्व-उत्सव, पूजा-पाठ, व्रत-नियम, धर्म-कर्म किया करते थे, इसी लिए उन्हें सहधर्मिणी का प्रयोजन था। हम लोगों को सहधर्मिणी की इतनी फ़िक्र काहे के लिए है?

शैलेश ने मर्मस्थल में आघात पाकर कहा—तो सहधर्मिणी वही है? श्राद्ध-शान्ति, पूजा-पाठ—

बात पूरी न होने पाई, बीच ही में क्षेत्रमोहन बोल उठे—सहधर्मिणी वही है भाई, वही, उसके सिवा और कुछ भी नहीं। देखो, तुम भी हिन्दू हो, मैं भी हिन्दू हूँ—Without offence. हम पूजा भी नहीं करते, मन्दिर में भी नहीं जाते, कृष्ण-विष्णु को लेकर खिलवाड़ करने का कु-अभ्यास भी हम लोगों में नहीं है। हमारे यहाँ की औरतें तो और भी harmless हैं। हम सहज मनुष्य—भले आदमी हैं। भैया, इतनी बड़ी पाँच-

सात अक्षर की 'सहधर्मिणी' लेकर हम क्या करेंगे, छोटी-सी 'स्त्री' होने ही से मज़े में हमारा काम चल जायगा—निर्वाह हो जायगा। तुम तनिक दया करके राज़ी भर हो जाओ भाई साहब। भवानीपुर के लोग मेरे पीछे पड़े हैं, तुम्हारी बहन की भी बड़ी इच्छा है। मेरी बात मान लो शैलेश बाबू।

एकाएक क्रोध के आवेश से शैलेश के मुख पर अन्धकार-सा छा गया। वह उठकर खड़ा हो गया, और बोला—तुम मुझे बना रहे हो क्षेत्र बाबू!

यह देखकर उमा घबराहट के मारे उठ खड़ी हुई। शैलेश को बिगड़ा हुआ जानकर क्षेत्रमोहन डरकर बार-बार यही कहने लगे—नहीं भाई शैलेश, यह बात नहीं है। अगर मैंने कुछ व्यङ्ग्य किया भी हो तो, सच समझो, तुम्हारी अपेक्षा अपने को ही अधिक किया होगा।

शैलेश ने इसका कुछ प्रतिवाद नहीं किया। वह सन्नाटे में आकर, जैसे का तैसा, जहाँ का तहाँ खड़ा रहा।

१५

क्षेत्रमोहन ने सोचा कि इस प्रसङ्ग में अधिक रगड़-झगड़ करना अभी ठीक न होगा। शैलेश का क्रोध और उत्तेजना शान्त होने के लिए पाँच-सात दिन की मुहलत देनी चाहिए। फिर एक दिन आकर भवानीपुरवाली सगाई की बातचीत की जायगी। यही निश्चय करके वे उमा को साथ लेकर उस

दिन अपने घर चले गये। किन्तु छः-सात दिन के भीतर ही छपरे की अदालत का एक मुक़दमा आ गया। इस कारण उन्हें कलकत्ता छोड़कर वहाँ जाना पड़ा। जाने के पहले वे वर-पक्ष और कन्या-पक्ष की ओर से विभा को यह आशा देते गये कि यह मामला जितना निराशाजनक जान पड़ता है, वास्तव में उतना नहीं है। बल्कि मछली चारे की ओर मुख़ातिब हो रही है। एकाएक काँटे के आटे की गोली निगल लेना उसके लिए कुछ विचित्र नहीं।

बहुत दिनों के बाद आज क्षेत्रमोहन की, स्त्री के साथ, प्रसन्न मन से बातचीत हुई। उमा के मुँह से विभा ने इस घटना के बारे में कुछ-कुछ सुन रक्खा था। विभा ने क्षेत्र बाबू से कहा—मैं समझती थी कि तुम उषा भाभी के बड़े हित-चिन्तक हो। महीना भर पहले मैं यह सोच भी न सकती कि तुम फिर मेरे भाई के ब्याह का उद्योग कर सकते हो।

क्षेत्र०—महीना भर पहले क्या मैं ही यह सोच सकता? मगर अब तो सिर्फ़ सोचना ही नहीं, ऐसा करना उचित ही जान पड़ता है। उषा भाभी का हितैषी तो मैं अभी तक हूँ, और हमेशा उनकी भलाई ही चाहता रहूँगा; किन्तु जो बात होने की नहीं, और जिसके होने से कुछ लाभ नहीं, उसके लिए सिर पटककर मरने से फल ही क्या!

विभा ने अत्यन्त विज्ञ मनुष्य की तरह दबी हुई हँसी से स्वामी पर चोट करके कहा—तुम मर्द होने के कारण ही, जान

पड़ता है, इतनी देर में भाभी को पहचान सके। लेकिन मैंने एक बार देखते ही उन्हें पहचान लिया था। उनके साथ हम लोग किसी तरह निर्वाह नहीं कर सकते थे।

चेत्रमोहन ने कहा—सो तो आँखों से देख ही लिया विभा। उनको यहाँ से खिसकते ही बन पड़ा। और, उन्हें पहचानने में हम लोगों में भेद अवश्य हुआ था। और ज़रा और तरह का कुछ होता तो आज क्या का क्या होता, इसकी आलोचना इस समय वृथा है। हाँ, यह तुम्हारी बात मैं अवश्य मानता हूँ कि मुझसे थोड़ी सी भूल हुई थी।

विभा ने कहा—ख़ैर, तुमने अपनी भूल मान तो ली। एकाएक जप-तप और हिन्दू-आचार-विचार की प्रशंसा तुम जिस तरह शतमुख होकर करने लगे थे उसे देखकर मैं तो डर गई थी। हम लोग भी मुसलमान या ईसाई नहीं हैं। फिर अपने को छोड़कर सभी छोटे हैं, उनके हाथ का खाना खा लेने से ही जाति चली जायगी, यह घमण्ड कोई क्यों करे? पण्डिताई चाल के अलावा और सभी रास्ते नरक में जाने के हैं, यह उषा की धारणा उनके बाप ही के घर चल सकती है, यहाँ नहीं। और, चल न सकने के कारण ही तो अपने स्वामी के घर में वे रह नहीं सकीं।

यह बात एकदम सच भी न थी, और एकदम झूठ भी नहीं। इस तरह सच और झूठ, दोनों का मिश्रण होने के

कारण क्षेत्रमोहन चुपचाप अपनी स्त्री के मुँह की ओर ताकने लग गये, कुछ जवाब न दे सके।

इसी समय वहाँ उमा ने आ करके, विस्मित होकर, पूछा—मामला क्या है दादा?

विभा अपनी बात के सिलसिले में कहने लगी—केवल अपनी जाति या धर्म बचाने के लिए चले जाना ही क्या भाभी के लिए सबसे अधिक आवश्यक था? मान लो, तुम्हारा यह उलाहना सच हो कि मेरे ही लिए दादा ने उनका अपमान किया, तो क्या वैसा ही अपमान उनके लिए तुमने मेरा नहीं किया था? तो क्या उसके लिए मैं तुमको छोड़कर बाप के घर चली जाऊँ? तुम क्या यही कहते हो?

क्षेत्रमोहन ने कहा—नहीं, मैं यह नहीं कह सकता।

विभा ने कहा—"मैं जानती हूँ, तुम नहीं कह सकते।" फिर उमा को लक्ष्य करके कहा—तुम्हारे दादा एकाएक एक नई चीज़ को बाहर से देखकर उस पर रीझ गये थे। हिन्दुओं के धार्मिक कट्टरपन की शिक्षा अवश्य हम लोगों ने नहीं पाई, लेकिन मा-बाप से जो कुछ हमने पाया या सीखा है, वह उससे कहीं अधिक भला है, बहुत अधिक सत्य है।

ज़रा हँसकर फिर कहा—तुम्हारे दादा की बड़ी इच्छा थी कि तुम इनकी सलहज के पास बैठकर उनसे बहुत कुछ सीख लो। इस वक़्त बैठकर सुनने के लिए मुझे तो फ़ुरसत

नहीं है भाई। न हो, अपने दादा को ही सुना दो कि तुमने उनसे क्या-क्या सीखा, और क्या-क्या सीखने को बाक़ी रह गया।

अब विभा मुसकिराती हुई उठकर चली गई।

चेत्रमोहन चुपचाप बैठे रहे। छोटी बहन के सामने अपनी स्त्री का यह व्यङ्ग्य का खोंचा उन्हें बहुत अखरा, लेकिन वे कुछ जवाब नहीं दे सके। हिन्दू-आचार-विचार की बहुत-सी बातों से उनका समाज हीन है, वे ख़ुद हिन्दुओं के अधिकांश आचार-विचारों को नहीं पसन्द करते; किन्तु न जाने क्यों हिन्दू-स्त्रियों की आचार-निष्ठा, पुराने ज़माने की जीवन-प्रणाली की कल्पना की ओर उनका चित्त अत्यन्त आकृष्ट हुआ करता था। इसी कारण अकस्मात् उसी निष्ठा और जीवन-प्रणाली की प्रतिमूर्ति उषा को सामने पाकर वे एकदम मुग्ध हो गये थे। किन्तु उसी के आचरण से आज उन्हें सबके सामने सिर नीचा करना पड़ा। इसी सलहज को केन्द्र करके वे आत्मीय-परिजनों के सामने गर्व के साथ बारम्बार जिस शिक्षा और संस्कार की बात कहा करते थे, उसी जगह पर आज उनके अत्यन्त आघात पहुँचा। उषा अपने लिए, अपने काम के लिए आप ही ज़िम्मेदार है, उसने कुछ भी अन्याय नहीं किया, उसे अन्याय छू तक नहीं गया, वह अन्याय कर ही नहीं सकती—इस बात को ज़ोर देकर वे कहना चाहते थे अवश्य, पर मुँह में जाकर अटक जाती थी। इसी से स्त्री के चले

जाने पर उन्होंने उमा के सामने कुछ कुछ कैफ़ियत देने के तौर पर सन्देह के स्वर में कहना शुरू किया—कट्टरपन सभी बातों का बुरा होता है, इसको मैं अस्वीकार नहीं करता उमा। हिन्दू-धर्म की यही गड़बड़ मिटानी चाहिए। लेकिन हम लोग उसकी अपेक्षा और भी बुरे हैं, यह बात न मानना तो और भी अन्याय होगा।

बड़े भाई और भावज के झगड़े की चर्चा में—उन दोनों की बहस में—उमा हमेशा चुप रहती थी। इसी लिए इस समय विभा की अनुपस्थिति में भी उसने कुछ उत्तर नहीं दिया।

उसी रात को छपरे जाने के पहले क्षेत्रमोहन ने विभा को बुलाकर कहा—मुझे लौटने में शायद चार-पाँच दिन की देर हो। इस बीच में भवानीपुर के आदमियों में से किसी के साथ अगर मुलाक़ात हो तो कहना, मैं शैलेश को राज़ी कर सकूँगा।

विभा ने पूछा—तो भाभी अब लौटकर न आवेंगी?

क्षेत्रमोहन ने कहा—नहीं। जितना सोचता हूँ, जान पड़ता है, शैलेश की अपेक्षा उन्हीं का अपराध अधिक है। तुमने ठीक बात कही। जो शिक्षा मनुष्य को इतना बड़ा सङ्कीर्ण-हृदय और स्वार्थी बना डालती है, उस शिक्षा का मूल्य और महत्त्व किसी ज़माने में चाहे जितना रहा है, आजकल कुछ भी नहीं है। कम से कम हम लोगों में उसके फिर जारी होने की ज़रूरत बिलकुल ही नहीं। यह बात सही है कि भाभी

में आचार-विचार की विडम्बना या आडम्बर ही था, सार वस्तु नहीं थी। होती तो पति के घर का आश्रय छोड़ कर वे चली न जातीं। अच्छा, जाता हूँ।

क्षेत्रमोहन घर से निकले और मोटर पर सवार हो गये।

मुफ़स्सिल का मुक़दमा करके कलकत्ते लौटने में उन्हें पाँच के बदले दस दिन लग गये। घर में पैर रखते ही पहले उमा से भेंट हुई। उसी ने ख़बर दी कि दो दिन हुए, छः महीने की छुट्टी लेकर शैलेश बाबू फिर इलाहाबाद चले गये। अब की सोमेन को भी, स्कूल से नाम कटवाकर, अपने साथ लेते गये हैं।

क्षेत्र०—योंही एकाएक ?

उमा—क्या जानें। सोमेन को लेने आये थे, बोले तबियत अच्छी नहीं है।

विभा के वहाँ पहुँचते ही उसी को सुनाकर क्षेत्रमोहन ने कहा—तबियत अच्छी न होने की बात ही है। किन्तु आराम होने की व्यवस्था यह ठीक नहीं।

और भी कुछ कहना चाहते थे लेकिन उमा को देखकर चुप हो गये।

१६

और दस-पाँच नये बैरिस्टरों के दिन जिस तरह कटते हैं उसी तरह क्षेत्रमोहन के भी दिन बीतने लगे। ख़र्च की तङ्गी

होने पर वे हिन्दुओं के रहन-सहन और पुरानी चाल की तारीफ़ करते हैं, और पैसा पास आते ही चुप हो जाते हैं—जिस तरह काम चलता था उसी तरह चलने लगता है। शैलेश के वे सच्चे हितैषी थे। वे शैलेश को अच्छी तरह पहचानते थे। शैलेश के जैसे दुर्बल-प्रकृति मनुष्य से लगभग सभी काम कराये जा सकते हैं, यही समझकर भवानीपुर के सम्बन्ध को उन्होंने अभी तक हाथ से जाने नहीं दिया। उन लोगों को वे यही भरोसा देते थे कि शैलेश के पछाँह से घूमकर आने में अभी देर है। उषा पर उनका अभी तक लगभग उतना ही स्नेह है, प्रायः वैसी ही श्रद्धा भी उन पर है। किन्तु उनके लौटकर आने की कोई ज़रूरत वे अब नहीं समझते। जहाँ रहें, अच्छी रहें, सुख से रहें; उनके धार्मिक जीवन की उत्तरोत्तर उन्नति होती रहे। किन्तु शैलेश की गिरिस्ती में अब उनकी आवश्यकता नहीं। आजकल उन्हें अक्सर यह ख़याल आता है कि उन्होंने शायद एक बात समझने में भूल की थी—स्वामी को उषा शायद प्यार नहीं कर सकी थी; प्यार करना सम्भव भी नहीं है। लड़कपन से कड़े आचार-विचार के शासन में रहते-रहते उषा की प्रकृति भी कड़ी हो गई है; अतएव इस जन्म की अपेक्षा परलोक पर ही उसकी अधिक श्रद्धा है। इसी लिए स्वामी को छोड़कर चले जाना भी उसके लिए इतना सहज हुआ। क्षेत्र बाबू के भीतर जो 'स्वामी' का भाव था वह उषा के इस आचरण से जैसा डरा था वैसा ही

व्यथित भी हुआ था। उन्हें जान पड़ता था कि उषा सोमेन को जो इतनी जल्दी इस तरह प्यार कर सकी, सो केवल कड़े कर्तव्य की दृष्टि से ही। सच्चा भीतरी स्नेह न होने के कारण ही छोड़कर जाते समय उसे बालक की ओर तनिक भी आकर्षण नहीं हुआ।

इसी तरह जब कलकत्ते में इन लोगों के दिन बीत रहे थे तब, लगभग दो महीने के बाद, एक दिन एकाएक यह ख़बर आई कि इतनी थोड़ी उमर में ही शैलेश ने सोमेन का जनेऊ कर डाला, और ख़ुद भी एक भक्त वैष्णव से गुरुमन्त्र लेकर उसका चेला हो गया है। पिता-पुत्र दोनों का गंगा-स्नान एक दिन के लिए भी बन्द नहीं हो सकता, और जिस महल्ले में मछली-मांस का सञ्चारमात्र होता है, उधर शैलेश पैर नहीं रखता।

सुनकर उमा चुपके-चुपके हँसने लगी। विभा ने स्वामी से कहा—यह दिल्लगी किसने की है? योगेश बाबू ने?

क्षेत्रमोहन ने कहा—यह सच है कि यह ख़बर योगेश बाबू ने ही भेजी है लेकिन ऐसी घनिष्ठता तो उनके साथ हम लोगों की है नहीं कि वे झूठमूठ लिखकर ऐसी दिल्लगी करें।

विभा ने कहा—दादा के दोस्त तो हैं ही, ऐसी दिल्लगी करने में दोष क्या है? ज़रा रुककर कहा—यह दिल्लगी करने की उन्हें क्यों सूझी, जानते हो? भाभी का सारा हाल तो उन्होंने दादा से सुना ही होगा, और यह भी उनसे

छिपा न रहा होगा कि इतने आदमियों में तुम्हीं अकेले भाभी के कट्टर आचार के भक्त हो उठे थे। इसलिए यह व्यंग्य-भरी मसख़री उन्होंने तुम्हारे ही साथ की है। (हँसकर) कोई मुक़दमा शुरू करने पर बीच-बीच में अगर तुम मुझसे राय लिया करो तो, जान पड़ता है, इतने मुक़दमे तुम्हें न हारने पड़ें।—उमा, आज ज़रा चटपट तैयार हो लो। सात बजे के भीतर न पहुँचने से लावण्य नाराज़ हो जायगी। अपने दादा को ज़रा एकान्त में बुलाकर कह देना कि हारने पर अबसे 'कंसल्ट' करें। जो लोग रुपये देते हैं वे ख़ुश होंगे।

उमा मुसकिराकर चली गई। उसने समझा कि योगेश बाबू के एकाएक इस तरह दिल्लगी करने का जो कारण उसकी भावज ने समझा है, वही ठीक है।

इसके पाँच-छः दिन बाद एक लम्बी-चौड़ी चिट्ठी लाकर क्षेत्रमोहन ने अपनी स्त्री के सामने फेंक दी, और कहा—देखो, यह चिट्ठी तो योगेश बाबू की नहीं, उनके बाप की लिखी हुई है। बुढ़ऊ की उमर सत्तर-बहत्तर वर्ष की होगी। उनसे कभी भेंट-मुलाक़ात या बातचीत नहीं हुई, चिट्ठी-पत्री का ही मेरे साथ परिचय है। आदमी कैसे हैं, सो तो मैं ठीक-ठीक नहीं जानता, लेकिन हाँ, यह अच्छी तरह जानता हूँ कि उनका मेरे साथ मसख़री करने का कोई सम्बन्ध नहीं।

चिट्ठी लम्बी थी, बँगला-भाषा में लिखी हुई थी। चुप-चाप आदि से अन्त तक दो बार पढ़कर विभा ने सिर उठाया,

और कहा—मामला क्या है ? तो तुमको फिर एक बार वहाँ जाना होगा ?

चेत्र०—लेकिन मुझे तो एक मिनट की भी मोहलत नहीं ।

विभा—यह कहने से नहीं चलेगा। इस विपत्ति में हम लोग न जायँगे तो कौन जायगा ? इस चिट्ठी में जो कुछ लिखा है उसमें से आधा भी अगर सच हो तो वह बहुत बड़ी विपत्ति है।

चेत्रमोहन ने सिर हिलाकर कहा—बेशक। इस बारे में मैं तुम्हारी राय से बिलकुल इत्तिफ़ाक करता हूँ। लेकिन जाऊँ कैसे ? और मेरे जाने से ही यह विपत्ति दूर हो जायगी, इसी का क्या भरोसा !

दोनों जने देर तक चुपचाप बैठे रहे अन्त को एक लम्बी साँस छोड़कर चेत्रमोहन ने कहा—शैलेश के लिए सभी कुछ सम्भव है। मन का ज़ोर जिसे कहते हैं वह उसमें बिलकुल नहीं है। वह चाहे भाड़ में जाय, दुःख तो इतना ही है कि अपने साथ लड़के को भी बिगाड़ डाल रहा है। जिस तरह हो, इसी बात में तुम्हें रुकावट डालनी चाहिए।

विभा विषण्ण, गम्भीर मुख किये सन्नाटे में बैठी रही। वह रो-धो सकती है, रूठ सकती है, सभी कुछ कर सकती है, लेकिन शैलेश को रोकने की शक्ति -समें नहीं है। इस बात को वह अपने मन में ख़ूब जानती थी।

क्षेत्रमोहन बहुत देर चुप रहकर धीरे-धीरे बोले—सन्देह तो मुझे बराबर ही था, लेकिन एक बात मैंने निश्चित रूप से जान ली है विभा! उषा को तुम्हारे दादा सचमुच प्यार करने लगे थे। इतना प्यार कभी उन्होंने सोमेन की मा को नहीं किया। यह सब शायद उसी प्यार की प्रतिक्रिया है।

विभा को बुरा मालूम पड़ा, बोली—इसी से, भाभी का मन अपनी ओर खींचने को यह कोशिश कर रहे हैं? देखो, मेरे दादा दुर्बल प्रकृति के हो सकते हैं, लेकिन नीच नहीं हैं। किसी को अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए इस तरह का स्वाँग रचने की तरकीब उनके दिमाग़ में कभी किसी तरह जगह नहीं पा सकती।

विभा बेचारी क्या जाने कि यह प्रतिक्रिया कैसी अद्भुत वस्तु है। क्षेत्रमोहन ने भी इस शब्द को केवल किताब में पढ़ रक्खा है; उन्हें भी इसका विशेष अनुभव न ठहरा। इसी से वे स्त्री के क्रोध के प्रत्युत्तर में चुप हो रहे। अँधेरे में तर्क का युद्ध चलाने के लिए उनका साहस न हुआ।

किन्तु प्रतिक्रिया चाहे जो हो, काम के वक़्त विभा की ही जय हुई। उसके स्वामी को कामकाज छोड़कर दो ही तीन दिन के भीतर इलाहाबाद जाना पड़ा। वहाँ से लौटकर क्षेत्रमोहन ने सिलसिलेवार जो कुछ वर्णन किया, वह जैसा हँसने योग्य था वैसा ही अप्रिय भी था। योगेश बाबू के घर के पास ही शैलेश का निवास-स्थान है। किन्तु शैलेश के साथ

क्षेत्र बाबू की मुलाक़ात नहीं हुई। वह अपने गुरुभाइयों के साथ श्री गुरुदेव के चरणकमलों के दर्शन करने वृन्दावन धाम को चल दिया था। मुलाक़ात हुई सोमेन से। उसका, शास्त्र-द्वारा अनुमोदित, ब्रह्मचारी का वेष है, शास्त्र-सङ्गत आचार-विचार हैं। स्थानीय एक निष्ठावान् ब्राह्मण सबेरे-शाम आकर शायद उसे ब्रह्मविद्या की शिक्षा दे जाता है। इतना हाल कह-कर क्षेत्रमोहन ने कहा—मुझको देखकर उस बेचारे लड़के की आँखों में आँसू भर आये। उसका चेहरा देखने से जान पड़ा कि मानो खाने-पीने का कष्ट ही उसे बहुत अधिक हो रहा है।

इस लड़के के ऊपर विभा का एक प्रकार का स्नेह था। वह उसे सचमुच चाहती थी। वह स्नेह या प्यार बहुत अधिक न होने पर भी उसका विदेश में दुःख पाने का समाचार विभा से नहीं सहा गया। उसकी भी आँखों में आँसू भर आये। वह बोली—तो फिर उसे तुम अपने साथ यहाँ ले क्यों न आये?

क्षेत्रमोहन ने कहा—ले आने की इच्छा तो हुई थी; किन्तु सोचकर देखा तो मुझे जान पड़ा कि इसका फल अन्त को अच्छा नहीं होने का। धर्म की सनक को ही मैं सबसे अधिक डरता हूँ। इससे शैलेश हम लोगों के और भी ख़िलाफ़ हो जाता।

विभा ने आँसू पोंछकर कहा—अगर मैं जानती कि मामला यहाँ तक पहुँच गया है, तो ख़ुद ही तुम्हारे साथ वहाँ चलती।

१७

चिट्ठी-पत्री का लिखना एक तरह से बन्द ही हो गया था, तो भी कलकत्ते के आत्मीय-स्वजनों अथवा इष्ट-मित्रों से शैलेश की यह अद्‌भुत कीर्ति-कथा छिपी नहीं रही। शायद सारा हाल थोड़ा-बहुत अधिक रङ्ग चढ़ा कर ही लोगों तक पहुँचाया गया था। कहने की ज़रूरत नहीं कि भवानीपुर के लोगों से भी कुछ छिपा न रह गया था। लज्जा के मारे विभा किसी को मुँह नहीं दिखा सकती थी। केवल स्वामी के आगे वह दम्भ दिखाकर कहा करती थी—दादा ज़रा लौट तो आवें। देखती हूँ, मेरे आगे वे किस तरह यह सब करते हैं!

क्षेत्रमोहन सुनकर चुप रहते थे। विभा के द्वारा इस मामले का कुछ प्रतिकार होने की बात पर वे ज़रा भी विश्वास न करते थे; किन्तु अपने समाज के सम्मिलित नैतिक दबाव पर उन्हें आस्था थी। दुर्बल-चित्त शैलेश शायद अधिक समय तक समाज से दूर न रह सकेगा, यह आशा वे मन में करते थे।

इधर शैलेश ने अर्ज़ी देकर चार महीने की छुट्टी और मंजूर करा ली थी। उसके भी समाप्त होने में और दो महीने बाक़ी हैं। यह निश्चय था कि वह नौकरी न छोड़ सकेगा। गङ्गा-स्नान वह चाहे जितना करे, तिलक-छापा चाहे जितना लगावे, किन्तु श्रीगुरुदेव और गुरुभाइयों का दल उसे नौकरी

छोड़ देने की बुरी सलाह—प्राण जाने पर भी—कभी नहीं देगा। उसके बाद नौकरी पर उसके लौट आने पर एक बार मोर्चा लेकर वे देखेंगे कि कुछ कर सकते हैं या नहीं।

उस दिन चाय पीने के लिए बैठने पर क्षेत्रमोहन ने विभा से कहा—अबकी लेकिन भाभी साहबा अगर आवेंगी तो उन्हें पहले की तरह चटपट भाई को बुलाकर मायके भाग जाने का डौल नहीं करना पड़ेगा। जप-तप करने में दोनों की ख़ूब निभेगी।

विभा का मुख मलिन हो गया। उसने पूछा—उनके आने की ख़बर तुमने सुनी है क्या?

क्षेत्र०—नहीं तो।

विभा ने दम भर चुप रहकर धीरे-धीरे कहा—सुना है. देहातों में तरह-तरह के जादू-टोने किये जाते हैं। अच्छा, तुम इस पर विश्वास करते हो?

क्षेत्रमोहन ने कहा—नहीं। और, अगर किये भी जाते हों तो उषा यह सब कभी न करेंगी।

विभा—क्यों न करेंगी?

क्षेत्रमोहन ने कहा—भाभी पर मैं प्रसन्न नहीं हूँ, उन पर अब मेरी वह श्रद्धा भी नहीं है; लेकिन मैं यह तुमसे क़सम खाकर कह सकता हूँ कि ये नीचता के काम वे कभी नहीं कर सकेंगी। वे इतनी नीच नहीं हैं।

परन्तु विभा को इस पर पूरा विश्वास न हुआ। उसने धीरे-धीरे इतना ही कहा—चाहे जो हो, मैं भी तुमसे प्रतिज्ञा करके कहती हूँ कि लड़के को अवश्य वहाँ से ले ही आऊँगी।

बैरा ने आकर ख़बर दी कि बन्धू दो बड़े कार्पेट माँगने आया है।—बन्धू शैलेश का बहुत दिनों का पुराना नौकर है।

विभा ने विस्मित होकर पूछा—वह कार्पेट लेकर क्या करेगा?

यों कहते-कहते दोनों पति-पत्नी कमरे के बाहर निकल आये। बन्धू ने सलाम करके अपनी प्रार्थना जताई।

विभा—कार्पेट क्या होंगे बन्धुआ?

बन्धू—क्या जानें मेम साहब, गाना-बजाना शायद कुछ होगा।

विभा—कौन गावे-बजावेगा रे?

बन्धू—साहब के साथ तीन-चार आदमी आये हैं। जान पड़ता है, वही यह सब करेंगे।

विभा—क्या दादा आ गये?

क्षेत्रमोहन—शैलेश बाबू लौट आये?

बन्धू ने गरदन हिलाकर सूचित किया—हाँ, कल रात को सब लोग लौट आये हैं।

बन्धुआ कार्पेट लेकर चला गया। क्षेत्रमोहन और विभा, दोनों जने सिर झुकाये चुपचाप जहाँ के तहाँ खड़े रहे। उस दिन किसी तरह धैर्य धारण करके दूसरे दिन तीसरे पहर क्षेत्र

बाबू, उमा और विभा को साथ लिये, शैलेश के घर पहुँचे। अभ्यास के अनुसार नीचे लाइब्रेरी के कमरे में जाना चाहते थे कि उसमें बाधा पड़ी। दरवाज़े पर वह भारी परदा नहीं पड़ा था—भीतर का सारा दृश्य बाहर ही से देख पड़ रहा था। एक ही दिन में कमरे का रूप बदल गया था। बाहर की आलमारियाँ अवश्य थीं, किन्तु और कोई असबाब वहाँ न था। फ़र्श के ऊपर कम्बल और उस पर धुली हुई जाजिम बिछाकर दो आदमी विराजमान थे; उनके गोल-मोल पुष्ट शरीर में सर्वत्र हरिनाम की छाप लगी हुई थी। गले में मोटे दानों की तुलसी की मालाएँ पड़ी थीं। एकाएक क्षेत्र बाबू और उमा तथा विभा को अँगरेज़ी पोशाक में देखकर, साहब-मेम समझकर, वे लोग डर गये। उनके विश्राम में विघ्न न डालकर तीनों जने ऊपर चढ़ने लगे। इतने में रसोई बनानेवाले उड़िया ब्राह्मण ने मना करते हुए कहा—ऊपर न जाइएगा, वहाँ गोसाईं महाराज का आसन है।

क्षेत्रमोहन ने पूछा—गोसाईंजी कौन?

रसोइया महाराज चुप रहे, कुछ उत्तर न दिया।

क्षेत्र बाबू ने फिर पूछा—साहब (यानी शैलेश) कहाँ हैं?

उत्तर में उसने ऊपर की ओर उँगली का इशारा कर दिया। क्षेत्रमोहन ने वहीं खड़े होकर "शैलेश! शैलेश!" कहकर पुकारना शुरू कर दिया। शैलेश तो नहीं, लेकिन उसके बदले सोमेन, आवाज़ सुनकर, दौड़ा आया। एकाएक

सोमेन की वेश-भूषा और चेहरा देखकर विभा तो रो दी। वह बिना किनारे की सादी मोटी धोती पहने था, सिर पर मोटीसी ज़बरदस्त चोटी थी, गले में तुलसी की माला थी। उसने दूर ही से इन लोगों को प्रणाम किया, पास नहीं आया।

उमा उसे छूने जा रही थी। क्षेत्रमोहन ने इशारे से रोक कर कहा—रहने दो, इस कुबेला में उसे छूने की ज़रूरत नहीं। बेचारे को शायद अभी ठण्डक में नहाना पड़ेगा।—तुम्हारे बाबूजी कहाँ हैं सोमेन?

सोमेन—प्रभुपाद श्रीगोस्वामी गुरुदेव से श्रीमद्भागवत पढ़ रहे हैं।

क्षेत्रमोहन ने कहा—हम लोग यहीं खड़े हैं, अपने बाबूजी को जाकर हमारे आने की ख़बर तो दे आओ।

सोमेन—ख़बर पहुँच गई। वे आ रहे हैं।

थोड़ी देर के बाद खड़ाऊँ पहने शैलेश नीचे उतरा। वह भी सोमेन की सी सादी मोटी धोती और कुर्ता पहने था, सिर पर मोटी चोटी थी। तुलसी की माला भी थी। किन्तु इसके सिवा उसके चेहरे में कोई विशेष परिवर्तन के लक्षण नहीं देख पड़ते थे। तथापि भीतर से वह बहुत कुछ बदल गया है, यह बात पल भर देखने ही से स्पष्ट मालूम पड़ जाती थी। अत्यन्त विनम्र भाव से कोमल स्वर से बातचीत करता था। उमा और विभा ने प्रणाम किया। उसने दूर ही खड़े रहकर आशीर्वाद दिया, छूने के डर से वह पास नहीं आया।

चंद्रमोहन ने कहा—तुम्हारे घर में क्या बैठने के लिए ज़रा-सी जगह भी नहीं है?

शैलेश ने लज्जित भाव से कहा—बाहर की बैठक गन्दी हो गई है, सफ़ाई करनी होगी।

चंद्रमोहन ने कहा—तो फिर इस वक़्त हम लोग जाते हैं (सोमेन को लक्ष्य करके) इस समय जाते हैं। हम लोगों की शायद बहुत ज़रूरत नहीं होगी, तो भी, कहे जाता हूँ कि अगर कभी हमारे बैठने लायक़ थोड़ी-सी जगह हो तो ख़बर देना भैया! (उमा और विभा से) चलो।

गाड़ी पर बैठकर विभा ने रास्ते भर किसी से एक भी बात नहीं की। केवल उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बह रही थी! ये लोग एक बात, बिना किसी संशय के, समझ आये कि इस घर में अब उनके लिए स्थान नहीं रहा। विभा ने स्वामी के आगे यह प्रतिज्ञा की थी कि दादा चाहे जो करे, मैं सोमेन को उनसे ज़बरदस्ती छीन लाऊँगी। स्नेह की यह दम्भ-भरी उक्ति वारंवार दोनों को याद पड़ी; किन्तु दारुण लज्जा के मारे उसका आभास तक कोई नहीं दे सका—उसका नाम भी कोई ज़बान पर नहीं ला सका।

इसके बाद महीने भर से अधिक समय बीत गया। इस बीच में शैलेश के नवीन अद्भुत आचरण की चर्चा ने आत्मीय-स्वजनों के बीच—परिचित-इष्टमित्रों की मण्डली में—एक ऐसी हलचल पैदा कर दी कि मानो लोग सत्य या वास्तविक

तथ्य के अन्दर भी नहीं बँध रहना चाहते थे—बात का बतङ्गड़ बनाकर ही दम लेना चाहते थे। एक मुँह से दूसरे मुँह में जाकर और वहाँ से अतिरञ्जित, पल्लवित रूप में निकलकर इस घटना ने ऐसा कुत्सित रूप धारण कर लिया कि विभा का कहीं आना-जाना या किसी को मुँह दिखाना भी असम्भव हो गया। अथच इसका कुछ उपाय भी किसी को नहीं सूझता था।

क्षेत्रमोहन जानते थे कि संसार में अनेक उत्तेजनाएँ समय पाकर धीमी पड़ जाती हैं, धैर्य धारण करके स्थिर हो रहना ही इसका एकमात्र उपाय है। हाँ, केवल यह परलोक बनाने के लोभ का धन्धा ही ऐसा है, जो एक बार शुरू हो जाने पर फिर सहज में थमना नहीं चाहता। अनिश्चित के मार्ग में इस अत्यन्त सुनिश्चित फल या लाभ की आशा ही मनुष्य को पागल बनाकर मानो लगातार आगे ठेलती ले जाती है। इसके ऊपर इससे भी बढ़कर प्रचण्ड विभीषिका उषा की है। मित्र और शत्रु बनकर इस सर्वनाश की बुनियाद वही तो डाल गई है! किसी तरह कुछ भी ख़बर पाकर अगर वह यहाँ आ पड़ी, तो फिर सोलहों आने सत्यानास हो जायगा—कुछ भी आशा न रहेगी। आजकल उषा के नाम का उल्लेख केवल विभा के ही नहीं, क्षेत्रमोहन और उमा के भी बदन में आग-सी लगा देता है। वास्तव में उसे न बुला लाने से तो यह सब झञ्झट खड़ा होने की कभी किसी दिन सम्भावना न थी।

आज रविवार को स्वामी और स्त्री, दोनों यही चर्चा कर रहे थे। वहाँ अपमानित होकर लौट आने के दिन से आज तक इनमें से कोई उधर नहीं गया। किन्तु उस घर की कोई ख़बर इन्हें मालूम होने को बाक़ी नहीं रहती थी। गुरुभाइयों का दल अभी तक वहाँ से हिलने का नाम भी ज़बान पर नहीं लाता। और, श्रीगुरुदेव तथा उनकी गोसाईंन महरानी ऊपर के तल्ले में उसी तरह अटल होकर विराजमान हैं। सबेरे-शाम हरि-कीर्तन बराबर सिलसिलेवार होता रहता है। भोग-प्रसाद वग़ैरह की व्यवस्था भी दिन-दिन बढ़ती ही जा रही है। ये सब ख़बरें बन्धु-बान्धवों के मुँह से नियमित रूप से विभा के कानों तक पहुँचती रहती हैं। इनके अलावा एक अधिक समाचार हाल में सुना गया है। वह यही कि श्रीधाम नवद्वीप (नदिया) में एक जगह ख़रीदकर शैलेश बाबू ने अपने गुरुदेव के लिए एक अच्छा-सा आश्रम बनवा देने का पक्का विचार कर लिया है, और इसी महापुनीत कार्य के लिए एक बड़ी रक़म क़र्ज़ करने की कोशिश में इधर-उधर दौड़-धूप हो रही है।

विभा ने मलिन मुख से कहा—अगर यह ख़बर सच ही हुई तो क्या तुम एक बार दादा को समझाने की चेष्टा नहीं करोगे? लड़का क्या हमारी आँखों के सामने, हमारे देखते-देखते, यों ही सत्यानास जायगा?

क्षेत्रमोहन ने लम्बी साँस लेकर कहा—तुम्हीं बताओ, मैं इस मामले में क्या कर सकता हूँ?

विभा चुप हो रही। वह यह क्या जाने कि किस तरह क्या हो सकता है।

क्षेत्रमोहन एकाएक कह उठे—उस दिन के बाद फिर तो हम लोग कभी गये नहीं। आज चलो न, हो आवें ज़रा?

विभा का हृदय आज सचमुच भीतर से रो रहा था। इसी से, जान पड़ता है, आज उसके हृदय में अपने मान-अभिमान के ध्यान के लिए स्थान नहीं था। वह सहज ही राज़ी हो गई।

आज इन्होंने उमा को अपने साथ नहीं लिया। इस लड़की के सामने आज लज्जा की मात्रा बढ़ाने को उनका जी न चाहा। उनकी मोटर जब शैलेश के घर के सामने आकर रुकी, उस समय दस बज चुके थे। आज बाहर का बैठकखाना खुला हुआ था। दोनों गुरुभाइयों की जुगल-जोड़ी फ़र्श पर बैठी हुई एक बड़ा भारी गठ्ठर कसकर बाँध रही थी।

क्षेत्रमोहन ने उनसे पूछा—शैलेश बाबू घर में हैं?

दोनों चेलों ने सिर उठाकर उनकी ओर देखा। तनिक चुप रहकर, कुछ सोचकर, उत्तर दिया—नहीं। परसों श्रीनवद्वीप-धाम को गये हैं।

"कब तक लौटेंगे?"

"कल या परसों सबेरे।"

"बाबू साहब का लड़का घर में है?"

दोनों ने गरदन हिलाकर बतलाया, है। साथ ही फिर वे अपने काम में लग गये।

उसके बाद घर के भीतर जाते ही दोनों ने एक साथ ही देखा, लाइब्रेरी के कमरे में दरवाज़े पर वही पुराना भारी परदा फिर पड़ गया है। ज़रा हटाकर फाँक करते ही देख पड़ा, पहले का सब सामान यथास्थान लौट आया है।

विभा ने कहा—उन दोनों आदमियों को खिसकाकर दादा ने घर की वही पुरानी हैसियत ठीक कर दी है। मुझे तो यह आशा न रह गई थी कि इतनी सुबुद्धि फिर उन्हें कभी होगी।

किन्तु बात पूरी भी नहीं होने पाई कि एकाएक पीछे आहट पाकर घूमकर देखते ही दोनों अचरज के मारे दङ्ग होकर ताकते रह गये। सोमेन बाहर कहीं गया था, वहीं से रबर का गेंद उछालता हुआ आता था। कहाँ वह तुलसी की माला गई, कहाँ चोटी गई, और कहाँ वह ब्रह्मचारी का वेश उड़ गया—किसी का कुछ पता नहीं था। गला नङ्गा था, कुर्ता वग़ैरह कुछ नहीं। एक बढ़िया लाल किनारी की, ज़री का काम की हुई, धोती भर पहने था। सिर पर बङ्गाली के लड़कों के से नये फ़ैशन के कटे हुए बाल थे। पैरों में वार्निश चमड़े का पम्प-जूता था।

उसने दौड़ते हुए आकर, विभा के लिपटकर, कहा—मा आगईं बुआजी! रसोईं के दालान में रोटी कर रही हैं—आओ, चलो।

विभा को, चलने के लिए, सोमेन उधर ही खींचने लगा। यह नई ख़बर सुनकर विभा सन्नाटे में आ गई। चेत्रमोहन ने कहा—तुम्हारी मा आगई सोमेन? वही तो मैं कहता था—

सोमेन ने कहा—कल दोपहर को आई थीं। चलिए फूफाजी, भीतर मा के पास चलिए।

चेत्र०—चलो।

तीनों जने रसोई के दालान के सामने जैसे पहुँचे, वैसे ही आहट पाकर चटपट हाथ धोकर उषा रसोई के बाहर निकल आई। विभा ने जूते उतारकर पास जाकर इस बार पहले ही पैर छुए। आप ही पहले बोली भी। कहा—देख लिया भाभी, क्या तमाशा हुआ?

उषा ने उसकी ठोढ़ी में हाथ लगाकर फिर उसे चूमकर हँसते-हँसते कहा—देखा क्यों नहीं बहन! लड़के का पहनावा और सूरत देखकर तो मेरे आँसू ही बह चले थे। चटपट माला-वाला सब तोड़ताड़कर फेंक दिया, नाई को बुलाकर बाल कटवाये; नई धोती, कुर्ता और जूते ख़रीद कर पहनाये, तब कहीं लड़के की ओर देखने को जी चाहा। अच्छा, आप ही लोग क्या कर रहे थे, बतलाइए तो भला?

अब उषा ने वक्र कटाक्ष से चेत्रमोहन की ओर देखा।

चेत्रमोहन बोले—यह सब कहने-सुनने की ऐसी जल्दी क्या है भाभी? धीरे-धीरे सहूलियत के साथ दम लेकर कह सकूँगा। अभी तो पहले ऊपर चलकर कुछ खाने-पीने को

दीजिए। अच्छा हाँ, शैलेश के दोनों गुरुभाइयों को तो बाहर देख आया हूँ, बैठे पोटली-पोटला बाँध रहे हैं, किन्तु श्रीप्रभुपाद गुरुदेव और गुरुआनीजी का कहीं पता नहीं। उनका क्या इन्तजाम किया आपने? ऊपर तो उनमेंसे कोई नहीं विराजमान है?

उषा हँस पड़ी। बोली—डरो नहीं, ऊपर उनमें से कोई नहीं है। वे भी नवद्वीप-धाम को पधार गये हैं।

क्षेत्र०—अच्छा, वहाँ से अब फिर तो नहीं लौटेंगे?

उषा ने वैसे ही हलके-से मुसकिराकर कहा—नहीं।

क्षेत्रमोहन ने विस्मय के साथ कहा—भाभी साहब, मुझे तो स्वप्न में भी यह आशा नहीं थी कि आपकी ऐसी सुबुद्धि भी होगी। ब्रह्मचारी ब्राह्मणकुमार की तुलसी की माला अपने हाथ से तोड़ डाली, चोटी कटवा दी—यह सब आपने क्या किया? बतलाइए तो भला।

उषा ने हँसकर, कुछ पहले कहे हुए, क्षेत्रमोहन के ही वाक्यों को दोहराते हुए उत्तर दिया—अच्छा तो ऐसी जल्दी क्या पड़ी है नन्दोईजी! धीरे-धीरे सहूलियत के साथ सब बतलाया जायगा। अभी ऊपर चलिए, पहले आपको कुछ भोजन तो करा लूँ।

शरद्-ग्रन्थावली

बँगला के लब्धप्रतिष्ठ उपन्यास-लेखक बाबू शरच्चन्द्र चट्टोपाध्याय के उपन्यासों का हिन्दी अनुवाद इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग से प्रकाशित हो रहा है। पुस्तकें बढ़िया एँटिक काग़ज़ पर छापी जाती हैं। जिल्द देखने ही योग्य होती है। इस ग्रन्थावली के ग्राहकों* को ग्रन्थावली की सभी पुस्तकें पौने मूल्य में दी जाती हैं। ग्रन्थावली की ये पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं;—

पण्डितजी—मतलब मास्टर साहब से है। इसमें बड़े अच्छे ढँग से कुलीनता, उच्च शिक्षा, द्विज और द्विजेतर, गांव की भलाई और अपनी तरक्क़ी, नई शिक्षा और मिथ्या अभिमान आदि पर विचार हैं। उपन्यास बहुत ही सुन्दर है। 'पण्डितजी' की सर्वत्र प्रशंसा हो रही है। बढ़िया जिल्द पर भाव-पूर्ण चित्र में दिखलाया गया है कि सुदूर श्रीवृन्दावन की ओर उपन्यास-नायक वृन्दावन अपनी गृहिणी कुसुम के साथ, सर्वस्व त्यागकर, पैदल जा रहा है। मूल्य १॥) रु०

बड़ी दीदी—मतलब बड़ी बहन से है। इसमें लेखक ने दिखलाया है कि माधवी भले घर की शिक्षिता बाल-विधवा है। बड़ा अच्छा स्वभाव है। नैहर की गृहस्थी की मानो जान है। उसके घर एक अजनबी उसकी बहन के पढ़ाने को रक्खा गया। उसे भोजन और स्थान भी दिया गया। यह असल में एक मालदार वकील का एम० ए० पास लड़का था जो माँ-बाप से रूठकर घर से चल दिया था। इसको माधवी अनजानते प्यार

---

* ॥) भेजकर ग्रन्थावली के ग्राहकों में नाम लिखाया जा सकता है।

करने लगी। दोनों का आचरण पवित्र रहने पर भी उनमें प्रेम का सञ्चार हो गया। अन्त में सुरेन्द्र गाड़ी से कुचला जाकर अस्पताल भेजा गया और, चङ्गा होने पर, अपने ननिहाल की ज़मींदारी का मालिक बना। अन्त में लेखक ने माधवी—बड़ी दीदी—को उसकी ससुराल पहुँचा दिया। वहां उसका पता पाकर सुरेन्द्र माधवी की दग़ा से नीलाम हुई सम्पत्ति उसे लौटाने गया किन्तु रास्ते में ही पुरानी चोट ने उभड़कर उसे अधमरा कर दिया। माधवी से भेंट हो गई; किन्तु उसी की गोद में सुरेन्द्र मर गया। मूल्य केवल १) रु०

परिणीता—ललिता थी तो रूप-गुण-आगरी किन्तु बचपन में ही बे-माँ-बाप की हो जाने से अपने निर्धन मामा गुरुचरण के यहाँ आ रही थी जिनके कई लड़कियाँ थीं। ये एक लड़की का विवाह करके ही निर्धन हो गये थे। जिन्होंने क़र्ज़ दिया था वे नवीन बाबू पड़ोसी थे।

बेचारा गुरुचरण इसी सोच में घुला जा रहा था कि चतुर भानजी ललिता के लिए अच्छा घर-वर कहाँ मिलेगा। पड़ोसी नवीन राय के घरवालों से ललिता के मामा-मामी की बड़ी घनिष्ठता थी। ललिता नवीन की स्त्री को माँ और उनके छोटे बेटे शेखर को बड़ा भाई कहती थी। शेखर ने ही ललिता को शिक्षा दी थी। ख़र्च के लिए वह शेखर से रुपये ले आती। शेखर के व्याह की बातचीत होने लगी। कई जगह लड़कियाँ देखी गईं। किन्तु उसने विवाह कराना अस्वीकार कर दिया पर कोई कारण नहीं बताया। बात यह है कि एकाएक शेखर का मन ललिता पर अनुरक्त हो गया।

अब नवीन ने गुरुचरण से रुपयों के लिए कड़ा तगादा किया। बेचारा मुसीबत में पड़ गया। इसी बीच एक पड़ोसिन, मनोरमा, के भाई गिरीन्द्र से गुरुचरण का परिचय हो गया। यह युवक ब्राह्मसमाजी था। स्वभाव का उदार था। अपनी बहन के साथ ताश खेलते समय ललिता की चतुराई, लुनाई आदि देखकर उसको प्राप्त करने की इच्छा गिरीन्द्र को हुई। इसलिए उसने भोले-भाले गुरुचरण से हेल-मेल बढ़ाया। उसने न केवल उन्हें बिना सूद के रुपये देना स्वीकार किया बल्कि रुपया वापस पाने की शर्त बिलकुल ढीली कर दी। उसने ललिता का विवाह अपने खर्च से कर देने की इच्छा भी प्रकट की।

इधर रुपया वापस पा जाने से नवीन राय झल्ला उठे। उधर एक बार रात को सूने में बे-समझे-बूझे ललिता ने गुड़िया के विवाह की माला शेखर को पहना दी। इसका अर्थ उसने ललिता को समझाया कि यह तो स्वयंवर हो चुका। इससे पहले तो ललिता चिढ़ी किन्तु बात का मर्म समझकर उसे मान लेना पड़ा कि सचमुच परिणय हो गया—वह परिणीता हो गई। अब बीमार माँ भुवनेश्वरी को जल-वायु बदलाने के लिए शेखर युक्तप्रान्त की ओर ले गया किन्तु साथ में ललिता नहीं गई।

गुरुचरण को ऋणमुक्त करा देने से ललिता और उसके मामा आदि गिरीन्द्र के कृतज्ञता-पाश में आबद्ध हो गये। नवीन

से कुछ उनका दिल भी हट गया। इसी सम्पर्क में, गिरीन्द्र की बातों में आकर, गुरुचरण ब्रह्मज्ञानी (ब्राह्मसमाजी) हो गये। इससे चिढ़कर नवीन ने उनसे कुछ भी ताल्लुक़ न रक्खा।

भुवनेश्वरी और शेखर को यह सब हाल प्रवास में भी मालूम हो गया। शेखर ने अब ललिता की आशा छोड़ दी। माँ-बेटे देश को लौट आये। बीमार होने के कारण गुरुचरण सपरिवार गिरीन्द्र के घर मुँगेर गये। वहीं उनकी मृत्यु हो गई। इधर नवीन राय भी चल बसे। थोड़े दिनों में ललिता अपनी ममेरी बहनों और मामी के साथ कलकत्ते लौटी। ललिता की मामी की इच्छा थी कि उनका मकान शेखर मोल ले ले। क्योंकि पहले नवीन राय की यही लालसा थी। यह प्रस्ताव गिरीन्द्र ने किया। शेखर ने बड़ी रुखाई से इसका उत्तर दिया। किन्तु जब उसे इस बात का पता चला कि गिरीन्द्र का विवाह ललिता की ममेरी बहन काली से हुआ है और ललिता ने उससे कह दिया है कि उसका विवाह हो चुका है और स्वामी जीवित है तब शेखर पर घड़ों पानी गिर गया। उसने जो ललिता का तिरस्कार किया था, गिरीन्द्र से खुलकर बातचीत नहीं करता था, उसके लिए वह पछतावा करने लगा। उसकी दृष्टि में ब्राह्मसमाजी युवक गिरीन्द्र बहुत आदरणीय हो गया। यहाँ विवाह की जो तैयारी हो रही थी वह शेखर ने रुकवा दी। अपने विवाह की सामग्री सजाने में दासी की भाँति नियुक्त ललिता को लक्ष्य करके शेखर ने माँ भुवनेश्वरी